68
मई 2003
Rs. 10/-
चन्दामामा

HERO
PIRANHA
ACTIVE
CADET HX
YANKEE
ROBO COP
Heroes start early.
Ride, race, take a tumble or even take a fall.
Because it's never too early to be a hero.
HERO CYCLES

विशेष आकर्षण

सम्पुट - १०७ मई - २००३ सञ्चिका - ५

झूठी पंडित-सभाएँ १९

वह, जो कर्ज़ नहीं देता २६

माया सरोवर १३

विघ्नेश्वर ४५

अन्तरङ्गम्

★ अच्छा पड़ोस ...८ ★ असली कुरूप ...९
★ माया सरोवर-१६ ...१३ ★ झूठी पंडित-सभाएँ ...१९
★ भारत दर्शक ...२५ ★ वह, जो कर्ज़ नहीं देता ...२६
★ चोर के लिए काई निकास नहीं ...३१ ★ संदेह ...३४
★ समाचार झलक ...३५ ★ क़िले की घेराबंदी ...३६
★ तृप्ति ...४२ ★ अपने भारत को जानो ...४४
★ विघ्नेश्वर-१७ ...४५ ★ राजा की कृपा ...५१
★ देव के सवाल ...५४ ★ परोपकार ...५७
★ अपराजेय गरुड़-२६ ...६० ★ मनोरंजन टाइम्स ...६४
★ चित्र कैप्शन प्रतियोगिता ...६६

SUBSCRIPTION

For USA and Canada
Single copy $2
Annual subscription $20

Remittances in favour of
Chandmama India Ltd.
to

Subscription Division
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
No. 82, Defence Officers Colony
Ekkatuthangal, Chennai - 600 097
E-mail : subscription@chandamama.org

शुल्क

सभी देशों में एयर मेल द्वारा
बारह अंक ९०० रुपये
भारत में बुक पोस्ट द्वारा १२० रुपये
अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या
मनी-ऑर्डर द्वारा
'चंदामामा इंडिया लिमिटेड'
के नाम भेजें।

संस्थापक
बी. नागिरेड्डी और चक्रपाणि

राष्ट्र के स्वास्थ्य का सूचक

जब यह घोषणा की गई कि चेचक की महामारी सदा के लिए निर्मूल कर दी गई है, तब विश्व ने बड़ी राहत की साँस ली। कुछ तीस वर्ष पूर्व एक अन्य अनिष्ट - पोलियो को धरती के मुखड़े से पूरी तरह साफ कर देने का विश्वव्यापी अभियान चला था। वर्ष २००५ को लक्ष्य सिद्ध करने की अंतिम तिथि निर्धारित किया गया है, जब पोलियो के प्रभाव से संसार को पूर्ण रूप से मुक्त कर दिया जायेगा।

ज्ञात रोगों के निरोध एवं चिकित्सा के लिए टीकाएँ एवं दवाइयाँ तो उपलब्ध हैं, लेकिन अज्ञात एवं रहस्यमय रोगों के उदाहरण भी कम नहीं हैं। और यहीं पर विश्व स्वास्थ्य संघटन (हू) एवं अन्य संस्थाएँ चाहे वे सरकारी हों या गैर सरकारी, रोग-निवारण एवं चिकित्सा के लिए अनुसंधान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं।

दुर्भाग्यपूर्ण बात तो यह है कि ऐसे लोगों की, जिनका संबंध दूसरों के स्वास्थ्य की देखभाल से है, कर्त्तव्यपरायणता और वचनबद्धता में कमी पाई जाती है। विकासशील पीढ़ी से संबंधित मामलों में, जिनके स्वास्थ्य का महत्व सर्वोपरि होना चाहिए, ऐसा और भी अधिक है। यदि उनका स्वास्थ्य सुरक्षित है, तभी हर राष्ट्र का भविष्य उज्जवल हो सकता है। इसलिए अभिभावकों का कर्त्तव्य है कि वे बच्चों के स्वास्थ्य और शारीरिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए संघटनों के साथ हाथ बंटायें। लापरवाही को कभी माफ नहीं किया जा सकता।

सम्पादक : *विश्वम*

Visit us at : http://www.chandamama.org
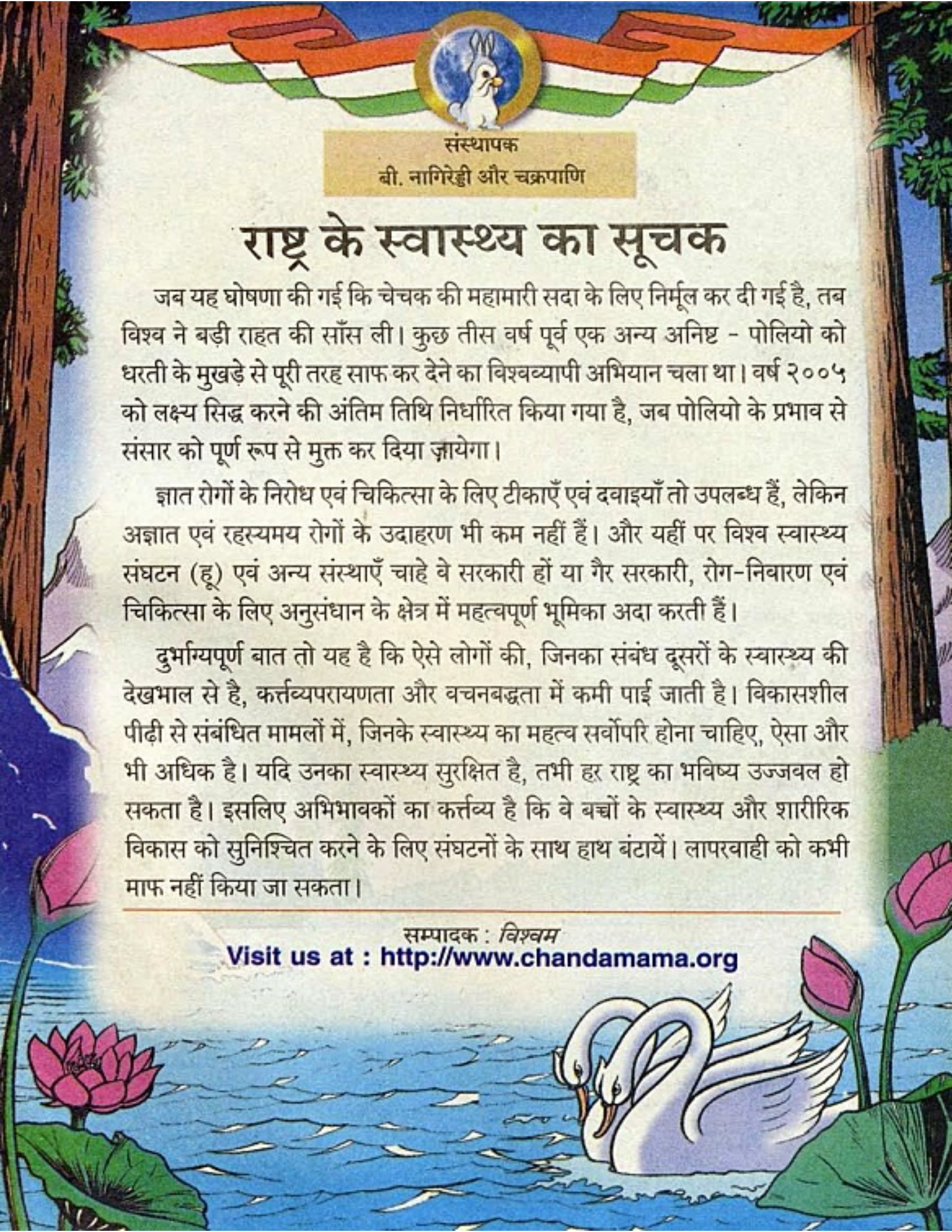
'हीरोज़ ऑफ इंडिया' प्रश्नोत्तरी में अपनी प्रविष्टि भेजें और आश्चर्यजनक पुरस्कार जीतें।

भारत के नायक - २०

यहाँ अतीत के कुछेक साहित्यिक नायकों का प्रसंग है। क्या उन्हें जानते हो?

तीन सर्वशुद्ध प्रविष्टियों पर पुरस्कार में साइकिलें दी जायेंगी।

मैं भक्ति काव्य का कवि हूँ। मुझे लोग भजनों और दोहों के कारण जानते हैं। मुझे लोग एक सामाजिक और धार्मिक सुधारक भी समझते हैं। मैं कौन हूँ?

मैंने तमिल में १३३० दोहों की रचना की है जो भिन्न-भिन्न विषयों के बृहत् विस्तार को आवृत करते हैं। मेरा नाम क्या है?

मैंने मराठी में भगवान पांडुरंग की स्तुति में ५००० अभंग की रचना की है। क्या मेरा नाम जानते हो?

4

मुझे लोग कवि चक्रवर्ती अथवा कवियों में सम्राट कहते हैं। मैंने १०,००० पदों में तमिल में रामायण की रचना की है। मेरा नाम बताओ।

मैंने 'सूर सागर' अथवा स्वरमाधुर्य का समुद्र की रचना की है। इस बृहत कृति में ब्रज भाषा में एक लाख कविताएँ हैं। क्या मेरा नाम जानते हो?

प्रत्येक प्रश्न के नीचे दिये गये स्थान को स्पष्ट अक्षरों में भरें। इन पाँचों में से आपका प्रिय आदर्श नायक कौन है? और क्यों? दस शब्दों में पूरा करें :

मेरा प्रिय राष्ट्रीय नायक .... है, क्योंकि

....

प्रतियोगी का नाम: ....

उम्र: .... कक्षा: ....

पूरा पता: ....

....

पिन: .... फोन: ....

प्रतियोगी के हस्ताक्षर: ....

अभिभावक के हस्ताक्षर: ....

इस पृष्ठ को काटकर निम्नलिखित पते पर ५ जून २००३ से पूर्व भेज दें।

हीरोज़ ऑफ इंडिया प्रश्नोत्तरी-२०
चन्दामामा इन्डिया लि.
नं.८२, डिफेंस ऑफिसर्स कॉलोनी
ईक्काडुथांगल, चेन्नई-६०० ०९७.

निर्देश :-

१. यह प्रतियोगिता ८ से १४ वर्ष की आयु तक के बच्चों के लिए है।
२. सभी भाषाओं के संस्करणों से इस प्रतियोगिता के लिए तीन विजेता चुने जायेंगे। विजेताओं को समुचित आकार की साइकिल दी जायेगी। यदि सर्वशुद्ध प्रविष्टियाँ अधिक हुईं तो विजेता का चुनाव 'मेरा प्रिय नायक' के सर्वश्रेष्ठ विवरण पर किया जायेगा।
३. निर्णायकों का निर्णय अंतिम होगा।
४. इस संबंध में कोई पत्राचार नहीं किया जायेगा।
५. विजेताओं को डाक द्वारा सूचित किया जायेगा।

पुरस्कार देनेवाले हैं

This vacation explore the fascinating world of computers.
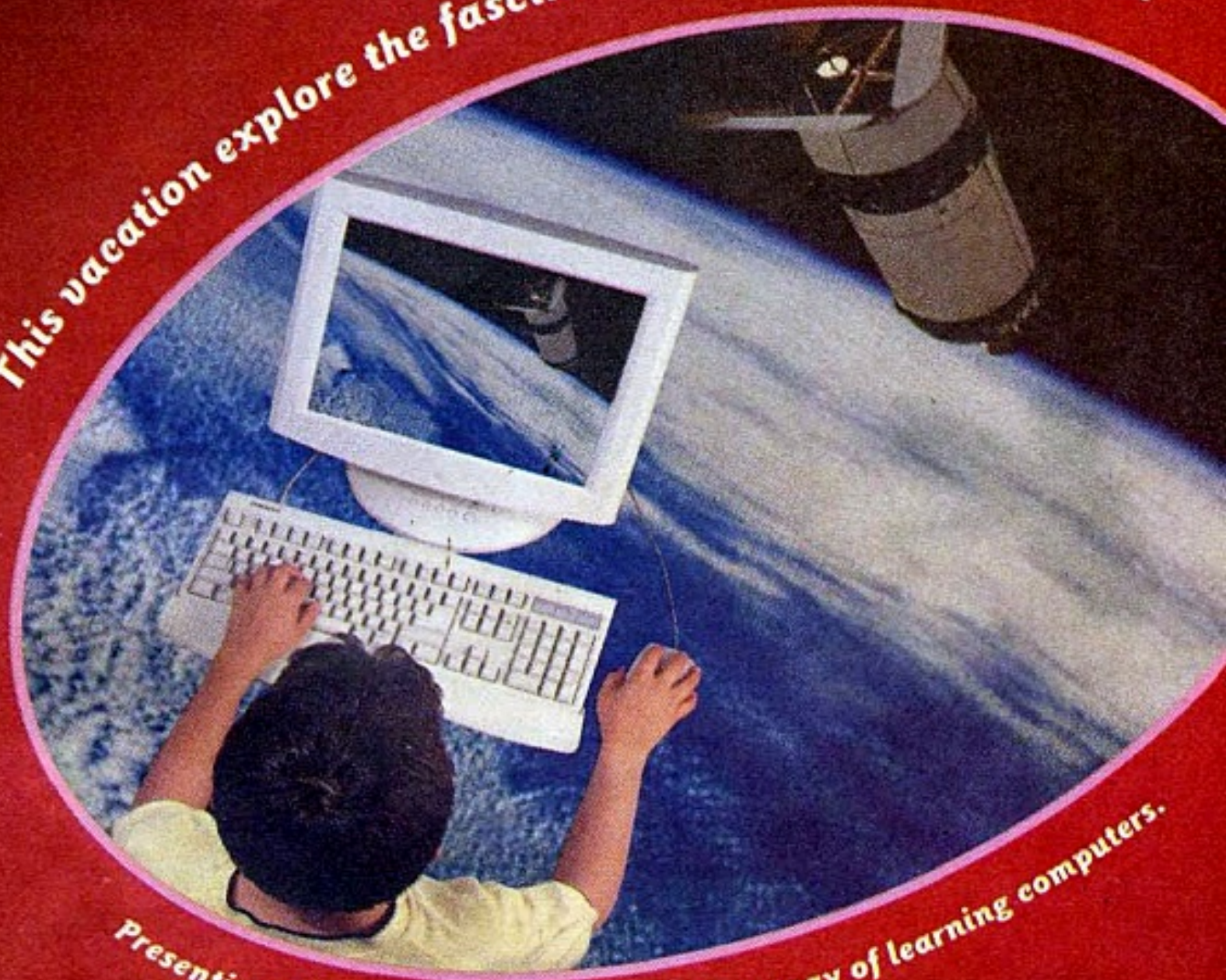
Presenting SWIFT Summer Camp - the fun way of learning computers.

Vacations are all about fun, discovery and doing something out of the ordinary. Which is why SWIFT presents the Summer Camp - an exciting 24-hr course designed especially for you to propel you into the world of computers.

It's loaded with interesting activities that will keep you hooked and stimulate that eager little mind of yours.

So waste no time and drop in with your parents at the nearest NIIT centre. And get set to take to the skies.

Visit the nearest NIIT centre for a 1-hour demo of SWIFT Summer Camp. And get a chance to win a computer.

Name:..................................

Std.:..................................

Address:..................................

....

Please cut and carry this coupon.

The easiest way to learn computers

Supported by:

अच्छा पड़ोस

हेलापुरी की एक तंग गली में पुरुषोत्तम व रघुनाथ दो पड़ोसी रहते थे। सम्पत्ति में दोनों एक समान थे, पर अपने को बड़ा दिखलाने की प्रवृत्ति दोनों में कूटकूट कर भरी हुई थी।

दोनों के घरों के बीच की दीवार को लेकर, अक्सर तू तू मैं मैं होता रहता था। एक के घर के पिछवाड़े के पेड़ की टहनियाँ दूसरे के घर में झुकती हों तो उसे लेकर दोनों एक-दूसरे पर गालियों की बौछार करते थे। दोनों घरों की औरतें भी जमकर इस बाद-बिबाद में भाग लेती थीं।

लड़ाई-झगड़े का यह सिलसिला बहुत समय तक जारी रहा। परंतु किसी ने भी दोस्ती का हाथ नहीं बढ़ाया। इन झगड़ों को समाप्त करने पर ध्यान नहीं दिया। उस समय बड़ी गली में एक घर बिकनेवाला था। जैसे ही रघुनाथ को यह मालूम हुआ उसने चुपचाप अपना घर सुगंधिपुर के भाग्यवान को बेच दिया और बड़ी ग़ली का घर खरीद लिया।

रघुनाथ ने घर खाली करते समय व्यंग्य-भरे स्वर में पुरुषोत्तम से कहा, ''हमने बड़ी गली में विशाल भवन खरीद लिया। अलावा इसके, हम अच्छे पड़ोस में भी रहने जा रहे हैं।''

''तुम लोग ही नहीं, हम लोग भी अच्छे पड़ोस में रहने जा रहे हैं,'' पुरुषोत्तम ने कहा।

''ऐसा कैसे हो सकता है? हेलापुरी में वही एक घर है, जिसकी बिक्री होनेवाली थी। उसे हमने खरीद लिया। कहीं हेलापुरी छोड़कर तो नहीं जा रहे हो?'' रघुनाथ ने ताना कसते हुए कहा।

''यह शहर छोड़कर भला हम क्यों जायेंगे? बड़ों के बनवाये इस घर में आराम से रहेंगे। वह भी अच्छे पड़ोस में। तुम्हारे सिवा जो भी आयेंगे वे अवश्य ही अच्छे पड़ोसी होंगे,'' पुरुषोत्तम ने ठठाकर हँसते हुए कहा।

- आंजनेय
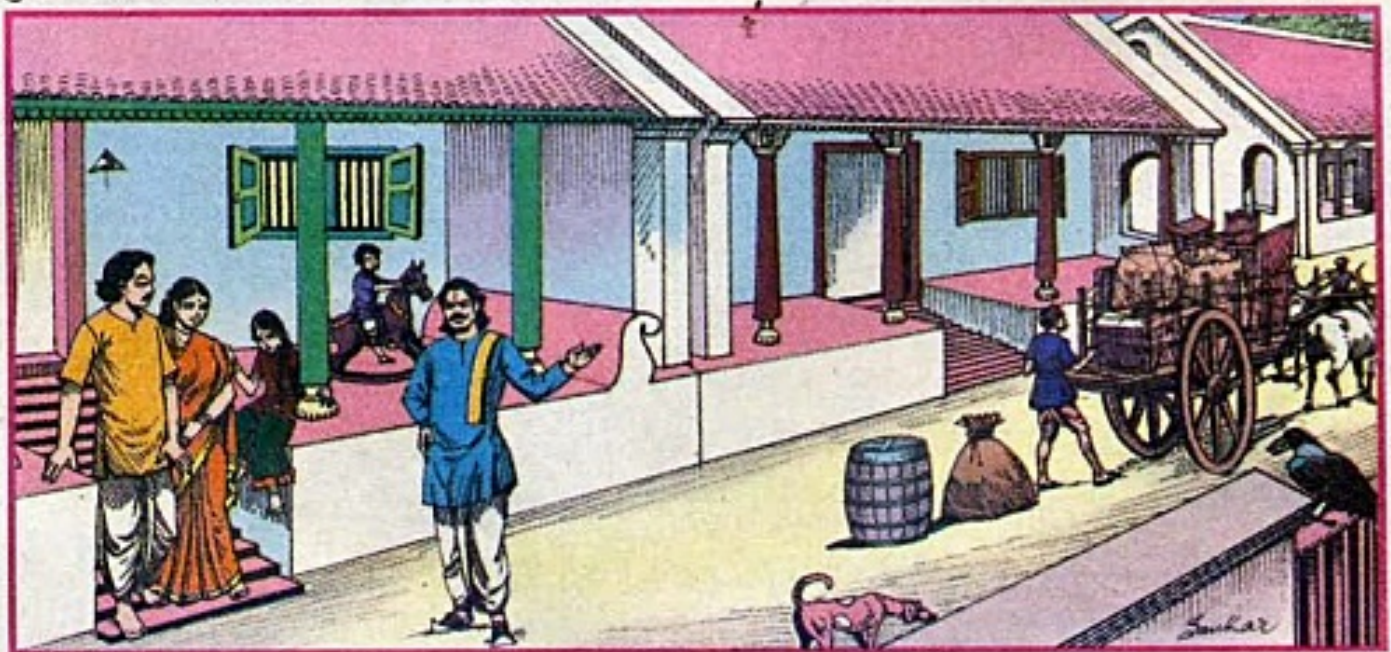
असली कुरूप

जगन जगन्नाथपुरी का निवासी था। वीर, शूर नामक उसके दो बेटे थे। बचपन में उबलते गरम पानी के गिरने से बड़े बेटे वीर का चेहरा थोड़ा-सा जल गया। चेहरे पर काले धब्बे पड़ गये, इसलिए देखने में वह थोड़ा-सा कुरूप लगता था। पर उसका मन साफ़ व निर्मल था। उसका बर्ताव बड़ा ही अच्छा होता था। छोटे बेटे शूर का स्वभाव इससे बिलकुल अलग था। उसे अपनी सुंदरता पर बड़ा ही नाज़ था।

एक दिन जगन ने खेत में बकरियों को एक जगह पर लाकर खड़ा कर दिया। वे गर्मी के दिन थे। वीर पेड़ों की छोटी-छोटी शाखाओं को काटकर और उनके पत्ते बकरियों को खिलाने लगा। शूर भी उसकी मदद करने लगा।

गर्मी में काम पर लगे अपने दोनों बेटों को देखकर जगन बहुत ही खुश होते हुए बोला, ''वीर, टीले पर ताड़ की जो जड़ें हैं, उखाड़कर ले आना। गरम करके खायेंगे।''

थोड़ी ही देर में वीर ताड़ की जड़ें उखाड़कर ले आया। इस बीच शूर ने सूखी लकड़ियाँ इकट्ठी कीं। फिर आग जलाकर उन्हें गरम किया। जब बाप और बेटे उन्हें खाने जा रहे थे तभी गाँव का पुरोहित धनंजय शास्त्री वहाँ आ पहुँचा।

जगन ने उसका स्वागत करते हुए कहा, ''आप सही समय पर आ गये। ताड़ की जड़ें और उखड़वाऊँ क्या? घर ले जायेंगे?''

''ज़रूर! मन ही मन मैं यही चाहता था। कहने से संकोच कर रहा था। पर इतनी कड़ी धूप में भी मैं यहाँ किसी दूसरे काम पर आया हूँ,'' शास्त्री ने कहा।

''शास्त्रीजी, बोलिये, किस काम पर आना हुआ?'' जगन ने कहा। ''जगन, तुम तो जानते ही हो कि इस गाँव पर ही भरोसा करके मैं जी रहा हूँ। मुझे एक गाय दान में मिली। उसे चराने

- गंगाशरण -

के लिए घास भी तो चाहिए न ! तुम्हारे पुरोहित होने के नाते मैं तुमसे गट्ठे भर की घास माँग रहा हूँ।'' शास्त्री ने कहा।

''जो भी चाहें, माँगने का आपको पूरा हक़ है। गाय की देखभाल में आपको कोई तकलीफ होती हो तो मेरे यहाँ भेज दीजिए। अपने अन्य पशुओं के साथ उसकी भी अच्छी तरह से देखभाल करूँगा। घास का गट्ठा मेरे बेटों में से कोई आपके यहाँ ले आयेगा। आइये, उस पेड़ की छाया में बैठकर बात करते हैं।'' कहते हुए वे एक पेड़ की छाया में आ गये।

इतने में ताड़ की जड़ें लेकर शूर भी वहाँ पहुँच गया। वह कहने लगा, ''शास्त्रीजी, बुरा मत मानिये। आप तो जानते ही हैं कि मैं एक सुंदर युवक हूँ। मेरी शादी में कोई दिक़्क़त नहीं होगी। कोई भी अपनी बेटी देने के लिए तैयार होगा। वीर उम्र में मुझसे बड़ा है। मुझे यह कहना भी नहीं चाहिए कि वह कुरूप है, पर लाचारी है। उसकी शादी जब तक नहीं हो जाती, मेरी शादी की भी कोई संभावना नहीं। इसलिए आप ही मेरे भाई के लिए कोई रिश्ता ढूँढ़िये। चाहे लड़की कैसी भी हो।''

शूर की बातों ने वीर को बहुत दुखी कर दिया। जगन, शूर पर नाराज़ हो उठा, पर उसने अपनी नाराजगी जाहिर होने नहीं दी।

शास्त्री ने ताड़ की जड़ों को लेते हुए कहा, ''शूर, ये कैसी बातें कर रहे हो ! ऐसा बोलना सरासर ग़लत है। दूसरों के मन को दुख पहुँचाना पाप है। वह तो कुरूप होने से भी बड़ा दोष है।'' फिर वीर की ओर मुड़ते हुए उसने कहा, ''वीर, सुंदरता से भी बढ़कर मनुष्य के लिए अलंकार हैं, उसके सद्गुण। मुझे पूरा विश्वास है कि अवश्य तुम्हें एक ऐसी पत्नी मिलेगी, जो तुम्हारे सद्गुणों पर मुग्ध होकर तुमसे विवाह रचायेगी। गोविंदपुर जाओ और वहाँ के निवासी गोपी से मिलो। तुम्हारा भला होगा।''

शास्त्री की बातों ने वीर के मन में कुतूहल जगाया। कुछ दिनों के बाद वह गोविंदपुर गया। गोपी के घर का पता लगाने में उसे कोई दिक़्क़त नहीं हुई। गोपी फूलों का व्यापारी था। अपने ही खेत में वह रंग-बिरंगे फूल उगाता और बेचता रहता था। वहीं पर उसने एक अच्छे घर का निर्माण किया और अपनी पत्नी गंगा और बेटी

ज्योति के साथ आराम से ज़िन्दगी काटने लगा।

गोपी ने वीर को देखकर समझा, वह फूल खरीदने आया होगा। पर जब उसे असलियत मालूम हुई तो उसने उसका सादर स्वागत किया। पत्नी और पुत्री का उससे परिचय कराया।

थोड़ी देर तक गपशप करने के बाद गोपी ने वीर से कहा, ''बेटे, कुछ साल पहले चोरी करते हुए मैं पकड़ा गया और जेल भी भेजा गया। मुझपर चोर की छाप लग गयी। जेल से बाहर आने के बाद न ही कोई मेरी बात का विश्वास करता था, न कोई मेरी सहायता करने को तैयार था। मैं भूखा मर रहा था। इसलिए मैंने फिर से चोरी करने की ठान ली। मैंने उसी पुराने घर में चोरी की और फिर से मैं पकड़ा गया। उस घर का मालिक बड़ा ही अच्छा आदमी है, विवेकी है। उसने मुझसे कहा, ''जन्म से कोई चोर नहीं होता। हालातों के शिकंजे में आकर तुमने चोरी की होगी। सज़ा तुममें परिवर्तन नहीं ला सकती। तुम्हें फिर से जेल भिजवाने की ग़लती नहीं करूँगा।'' उसने मुझे अपने ही घर में नौकर बना लिया। इस घटना के दो सालों के बाद जब उसे पूरा विश्वास हो गया कि मैं सुधर गया हूँ, तो उसने मेरी शादी अपने नौकर की बेटी इस गंगा से करा दी। हालांकि मेरी स्थिति अब अच्छी है, मैंने बहुत कुछ कमा भी लिया, पर कोई भी मेरी बेटी ज्योति से शादी करने को तैयार नहीं है। क्योंकि उनका समझना है कि यह एक चोर की बेटी है। वे यह कहते हुए मेरा मखौल उड़ाते हैं कि चोर को ही अपना दामाद बनाना।''

वीर कुछ कहे, इसके पहले ही गंगा कहने

लगी, ''आदमी को सुंदरता नहीं, गुण चाहिए। तुम्हारे बारे में शास्त्रीजी ने सब कुछ बता दिया। हम अपनी बेटी की शादी तुमसे करना चाहते हैं। क्या तुम्हें स्वीकार है?''

वीर ने कहा, ''मुझे भी मालूम है कि मैं थोड़ा-बहुत कुरूप हूँ। आपकी परिस्थिति का फ़ायदा उठाकर आपकी बेटी के दिल को दुखाना नहीं चाहता। मैं उसका पति नहीं बन सकता। मेरा एक भाई है। वह आपकी बेटी के योग्य वर है।'' फिर उसने यह ख़बर अपने पिता को भेजी।

जगन, उसकी पत्नी और उसका बेटा शूर ख़बर मिलते ही गोविंदपुर पहुँचे। शूर ज्योति की सुंदरता पर मुग्ध तो हो गया, पर जब उसे मालूम हुआ कि गोपी पहले चोर था, तब उसने साफ़-साफ़ कह दिया कि एक चोर की बेटी से किसी भी हालत में शादी नहीं करूँगा।

ये सारी बातें सिर झुकाकर ज्योति चुपचाप सुनती रही। जब उससे और सहा नहीं गया तब उसने शूर को फटकारते हुए कहा, ''कैसी बातें कर रहे हैं आप। कोयल की बच्ची और कौवे की बच्ची के रूप में कोई विशेष भेद नहीं होता। कोयल अपने मधुर स्वर से सबको सम्मोहित करती है। अभी-अभी तुम जैसे लोगों से मैं जान गयी कि आदमियों में भी कौवे जैसे लोग होते हैं। यह मत समझना कि तुम्हारी सुंदरता पर रीझकर कोई लड़की तुमसे विवाह करेगी। तुम्हारी बातें कड़ुवी हैं, तुम्हारे विचार गंदे हैं। अगर 'हाँ' कहेंगे तो मैं तुम्हारे बड़े भाई से शादी करूँगी।''

सबने ज्योति की बातों को सराहा। वीर के पिता ने शूर से कहा, ''कोई लड़की तुम्हें पसंद नहीं आती तो अपनी जीभ को काबू में रख। जो मुँह में आया, बको मत। जो अपने को काबू में नहीं रख पाता, वही असली कुरूप है।'' फिर वीर से पूछा, ''वीर, ज्योति तुमसे शादी करने को तैयार है। क्या तुम्हें यह रिश्ता मंजूर है?''

वीर ने 'हाँ' के भाव में सिर हिलाया। तब ज्योति के माता-पिता ने और वीर के माता-पिता ने उन्हें आशीर्वाद दिया।

वीर और ज्योति का विवाह हुआ और दोनों निश्चिंत होकर सुखपूर्वक ज़िन्दगी गुज़ारने लगे।

माया सरोवर

16

(आसमान में उड़नेवाले हंसों के रथ से फिसलकर माया सरोवरेश्वर जंगल में एक स्थान पर नर भक्षी जाति के द्वारा गरम किये जा रहे जल की हंडी में जा गिरा। उसने अपने साथ रथ पर आये हुए लोगों का वृत्तांत बताया। उनकी खोज में सब चल पड़े, तभी उन्हें सिद्धसाधक की चिल्लाहट सुनाई दी। उसके बाद)

सिद्धसाधक की 'जय महाकाल की !' चिल्लाहट सुनकर माया सरोवरेश्वर हठात् रुक गया और चारों ओर नज़र दौड़ाकर काँपने लगा। इसे देख पुजारी गणाचारी विस्मय में आ गया। उसके साथ आये नरभक्षी जाति के चार अनुचर चिल्लाहट की दिशा में आगे बढ़े।

उसी समय माया सरोवरेश्वर संभलकर गणाचारी से बोला, "तुम अपने अनुचरों को वापस बुला लो, इसी में उनकी ख़ैरियत है। वह चिल्लाहट महाकाल के एक भक्त की है। उनकी मंत्र-शक्तियों के सामने तुम्हारे भाले काम दे न पायेंगे।" ये शब्द सुनकर गणाचारी ठठाकर हँस पड़ा और बोला, "मानवभक्षी लोग ऐसे मंत्र-तंत्रों से भय नहीं खाते। जंगली देवता की कृपा से हमारा आहार बनने के लिए एक और व्यक्ति मिलने जा रहा है !"

गणाचारी की बात पूरी भी न हो पाई थी, तभी भाले ऊपर उठाये आगे बढ़नेवाले चार नरभक्षी लोग चीख़ते-चिल्लाते बेतहाशा दौड़कर गणाचारी के पास लौट आये और कंपित स्वर

बूढ़ा गणाचारी भागने के लिए वापस मुड़ा। सिद्धसाधक पुनः एक बार चिल्ला उठा, ''महाकाल की जय !'' भागने की कोशिश करनेवाले नर भक्षी लोगों के सामने पहुँचकर उसने ललकारा, ''तुम लोगों ने यहाँ से हिलने की कोशिश की तो अपने नर वानर का आहार बना डालूँगा। बताओ, तुम लोग कौन हो? यहाँ पर क्या कर रहे हो? कांचनमाला नामक राजकुमारी हंसों के रथ पर से इसी प्रदेश में गिर गई है। क्या तुम में से किसी ने उन्हें देखा है?''

सिद्धसाधक की बातें गणाचारी या उसके अनुचरों की समझ में न आईं। गणाचारी किसी बात की याद करने की कोशिश में सर उठाकर एक पेड़ की डालों की ओट में छिपकर भागने की सोचनेवाले माया सरोवरेश्वर को साधक की ओर संकेत करके बोला, ''हमारे जंगली देवता ने हमारे आहार के रूप में एक आदमी को भेजने की बड़ी कृपा की है, वही यह व्यक्ति है ! शायद राजकुमारी की बात यह जानता हो ! आप कृपया उसी से पूछकर देखिए।''

तब तक सिद्धसाधक नर भक्षी लोगों को भागने से रोकने के प्रयत्न में था, इसलिए उसकी दृष्टि माया सरोवरेश्वर पर न पड़ी थी। अब उसे देख डाँटकर बोला, ''अबे, खोपड़ी जैसे किरीटवाले तुम्हीं क्या माया सरोवरेश्वर हो? मैंने सुना था कि बड़े ही शक्तिशाली हो, पर देखने में कायर-से लगते हो ! यदि चोर की भांति तुमने भागने की कोशिश की तो शूल

में बोले, ''पुजारी जी, हम लोगों की जानें ख़तरे में हैं, हाथी जैसे नर वानर पर एक यमदूत सवार हो चिल्लाते इसी ओर आ रहा है।''

इस बार माया सरोवरेश्वर के साथ गणाचारी भी थर-थर काँप उठा। थोड़ी दूर पर पेड़ों की ओट में से शूल उठाये नर बानर को तेजी के साथ दौड़ाते उनकी ओर बढ़नेवाला सिद्धसाधक उन्हें दिखाई दिया।

''अबे, सुनो ! हम लोगों को यहाँ से भाग जाना उचित होगा ! तुममें से एक तुरंत सरदार शेरसिंह के पास दौड़ जाओ और उन्हें इस यम दूत का समाचार सुना दो। अगर हम इसके हाथ में पड़ गये तो हमारी जाति का सर्वनाश हो जाएगा। हमें इन लोगों से बचने का कोई उपाय तत्काल सोचना होगा। विलंब होने से हमारी हानि होने की पूरी संभावना है।'' यों सचेत कर

चुभोकर जमीन में गाड़ दूँगा; ख़बरदार !" सिद्धसाधक की बातें सुन माया सरोवरेश्वर गुस्से में आ गया, उस पर आक्रमण करने के ख़्याल से तलवार की मूठ पर हाथ डालकर खींचने को हुआ, पर पुनः संभलकर घृणापूर्ण स्वर में बोला, "शक्ल-सूरत और बोली से तुम एक कापालिक जैसे लगते हो। मैं तुम जैसे कमीनों पर तलवार नहीं चलाता। अभी अपना यह बकवास बंद कर तुम अपने रास्ते चले जाओ।"

"मैं सिद्धसाधक हूँ। महाकाल का भक्त हूँ। तुम्हारी बराबरी करनेवाला शत्रु मेरा सेवक बना हुआ है। मैंने उसको राजकुमारी की खोज में भेज दिया है। क्या तुम उसके साथ लड़ना पसंद करोगे? क्या मैं उसे वापस बुलवा लूँ?" इन शब्दों के साथ सिद्धसाधक ने उच्च स्वर में पुकारा, "अरे जलवृक, तुम कहाँ हो? तुम्हारी जाति का दुश्मन माया सरोवरेश्वर यहाँ पर है। तुम इसकी ताक़त की जाँच कर लो।"

इसके उत्तर में साधक का सेवक जलवृक राक्षस दूर से चिल्लाकर कंटीली झाड़ियों के ऊपर उछलते, ताल ठोंकते बोला, "वह दुष्ट माया सरोवरेश्वर कहाँ है? मैं अपने पत्थरवाले गदे से अभी उसे चकना चूर कर देता हूँ।"

जलवृक राक्षस इस तरह तेजी के साथ आगे बढ़ रहा था, तभी एक सालवृक्ष की ओट से मकरकेतु ने अपने जलग्रह को आगे बढ़ाकर जलवृक के रास्ते को रोका। जलग्रह भीषण रूप से चिंघाड़ करके सूँड फैलाकर राक्षस को पकड़ने को हुआ। जलवृक उछलकर एक ही छलांग में हट गया। बिजली की तेजी से पीछे हटकर उसने जलग्रह के सर पर अपने गदे का प्रहार किया। मकरकेतु भीषण गर्जन करके धमकी के स्वर में बोला, "अरे जलवृक राक्षस ! मैं तुम्हें अभी यमलोक भेज देता हूँ।" यों सचेत करके उसके कंठ पर छुरी भोंकने को हुआ, मगर छुरी का निशाना चूककर राक्षस के कंधे को चीर गया।

इस दृश्य को देखकर नर वानर पर बैठे सिद्धसाधक आवेश में आकर चिल्ला उठा, "चाहे बाद में जयशील मुझे कुछ भी कहे, मैं अभी इस माया सरोवरेश्वर और मकरकेतु का काम तमाम कर देता हूँ।" इन शब्दों के साथ उसने नर वानर को हांक दिया।

दूसरे ही क्षण चारों तरफ से सीटियाँ तथा तालियाँ बजाने की आवाज़ सुनाई दी।

सिद्धसाधक ने विस्मय में आकर सिर घुमाकर देखा। तब तक चारों तरफ़ के पेड़ों तथा झाड़ियों के पीछे अनेक नर भक्षी पहुँच गये थे। सरदार शेरसिंह अपने कंधे पर भाला लिये आगे बढ़ते हुए बोला, ''गणाचारी, यह आश्चर्य की बात नहीं है कि हमारे जंगली देवता ने इतने लोगों को हमारे आहार के रूप में भेजा है? ओह ! हमारे भगवान तो भक्तों के कल्पवृक्ष हैं न?''

सिद्धसाधक ने सरदार शेरसिंह की बातें सुनीं। साथ ही उसके अनुचर उल्लासपूर्वक बढ़े आ रहे थे। अब अपने शत्रुओं के साथ उसके प्राण भी ख़तरे में पड़नेवाले हैं, यों सोचकर हठात् उसने अपने नर बानर को मकरकेतु के निकट दौड़ाया।

मकरकेतु ने घायल जलग्रह के सिर पर हाथ रखा और थोड़ी देर तक स्नेह से उसकी पीठ पर हाथ फेरता रहा ! उसके उठ खड़े होते ही उस पर सवार होने को हुआ, परंतु पुनः थोड़ी दूर पर स्थित माया सरोवरेश्वर से बोला, ''माया सरोवरेश्वर ! कृपया आप इस जलग्रह पर सवार हो जाइए ! ये सिद्धसाधक स्वभाव से आवेशशील हैं, मगर बहुत ही उदार हैं। वैद्यदेव और जयशील दोनों हंसों के रथ पर शीघ्र यहीं पर आनेवाले हैं।''

नदी के तट पर जो घटना हुई थी, उससे माया सरोवरेश्वर सर्वथा अनभिज्ञ था। इसलिए मकरकेतु की बातें उसकी समझ में न आईं। फिर भी जलग्रह पर सवार होने से कम से कम उसकी सुरक्षा होगी, इस ख़्याल से वह क़दम में क़दम मिलाते उसके निकट पहुँचा। इस बीच मकरकेतु के हाथों तलवार की चोट खाया हुआ जलवृक राक्षस कराहते पेड़ के तने के सहारे उठ खड़ा हुआ। थोड़ी देर बाद सिद्धसाधक को देख नीरस स्वर में पूछा, ''मालिक ! क्या आज्ञा है?''

''मैं समझता हूँ कि तुम्हारी चोट कोई गहरी नहीं है। तुम पहले अपना गदा हाथ में ले लो।'' यों जलवृक को आदेश दे सिद्धसाधक ने मकरकेतु से पूछा, ''जानते हो, अब किसके द्वारा किसको ख़तरा उत्पन्न होने जा रहा है?''

''ये नर भक्षी इस भ्रम में पड़े हुए हैं कि जंगली देवता ने हमें उनके आहार के रूप में भेज दिया है। सबसे पहले हमें इन दुष्टों से अपनी रक्षा करनी है।'' मकरकेतु ने तलवार की मूठ को कसकर पकड़ते हुए उत्तर दिया।

''मकरकेतु, मैं तुम्हारी अक़्लमंदी की दाद देता हूँ। राजा कनकाक्ष के बच्चों की खोज कराकर

उनकी रक्षा करके राजा के हाथ सौंपे बिना मैं और जयशील हम दोनों किन्हीं नर भक्षी लोगों का आहार बन जाना नहीं चाहते। मैं उन जंगली लोगों को समझाने की कोशिश करता हूँ। यदि मेरी बातों पर ध्यान न दिया तो औरतों तथा बच्चों को छोड़ बाक़ी सबको एक ही कतार में खड़ा करके निर्दयतापूर्वक सबके सर काट डालेंगे।'' सिद्धसाधक ने क्रोध पूर्ण स्वर में कहा।

गणाचारी जो अब तक आँखें मूँदे झूम रहा था, अचानक उछल पड़ा और चिल्ला उठा, ''हे मेरे जंगली देवता!'' फिर बोला, ''भूख! भूख!' अरे जंगली देवता के द्वारा हमारे लिए आहार के रूप में भेजे गये मानवो! चलो, जंगली देवता के मंदिर में। वहाँ पर पहले हम तुम्हें देवता के लिए नैवेद्य चढ़ाकर तब हम खा डालेंगे।''

सिद्धसाधक जरा भी विचलित हुए बिना शूल उठाकर बोला, ''अरे नर माँस भक्षी! तुम लोग भूल कर रहे हो! हम किसी के भी द्वारा तुम्हारे वास्ते आहार के रूप में भेजे नहीं गये हैं। हंसों के रथ पर से फिसलकर जंगल में गिरे हुए अपने प्रिय जनों की खोज में आये हैं। उनमें से माया सरोवरेश्वर हमारे हाथ लगा है। अब हम अपने रास्ते जाते हैं, तुम भी अपना रास्ता नापो।''

''हमारी भूख की बात क्या होगी? हम लोग कई सप्ताहों से आहार के अभाव में उपवास कर रहे है।'' सरदार शेरसिंह अपने भाले को चमकाते सिद्धसाधक के सामने आ खड़ा हुआ।

फिर क्या था, सिद्धसाधक का संकेत पाकर नर वानर ने सरदार शेरसिंह को अपने दोनों हाथों से मरोड़कर पकड़ लिया और उसे ऊपर उठाया। तभी माया सरोवरेश्वर द्वारा सवार जलग्रह एक ही छलांग में आगे बढ़ा और अपनी सूंड फैलाकर
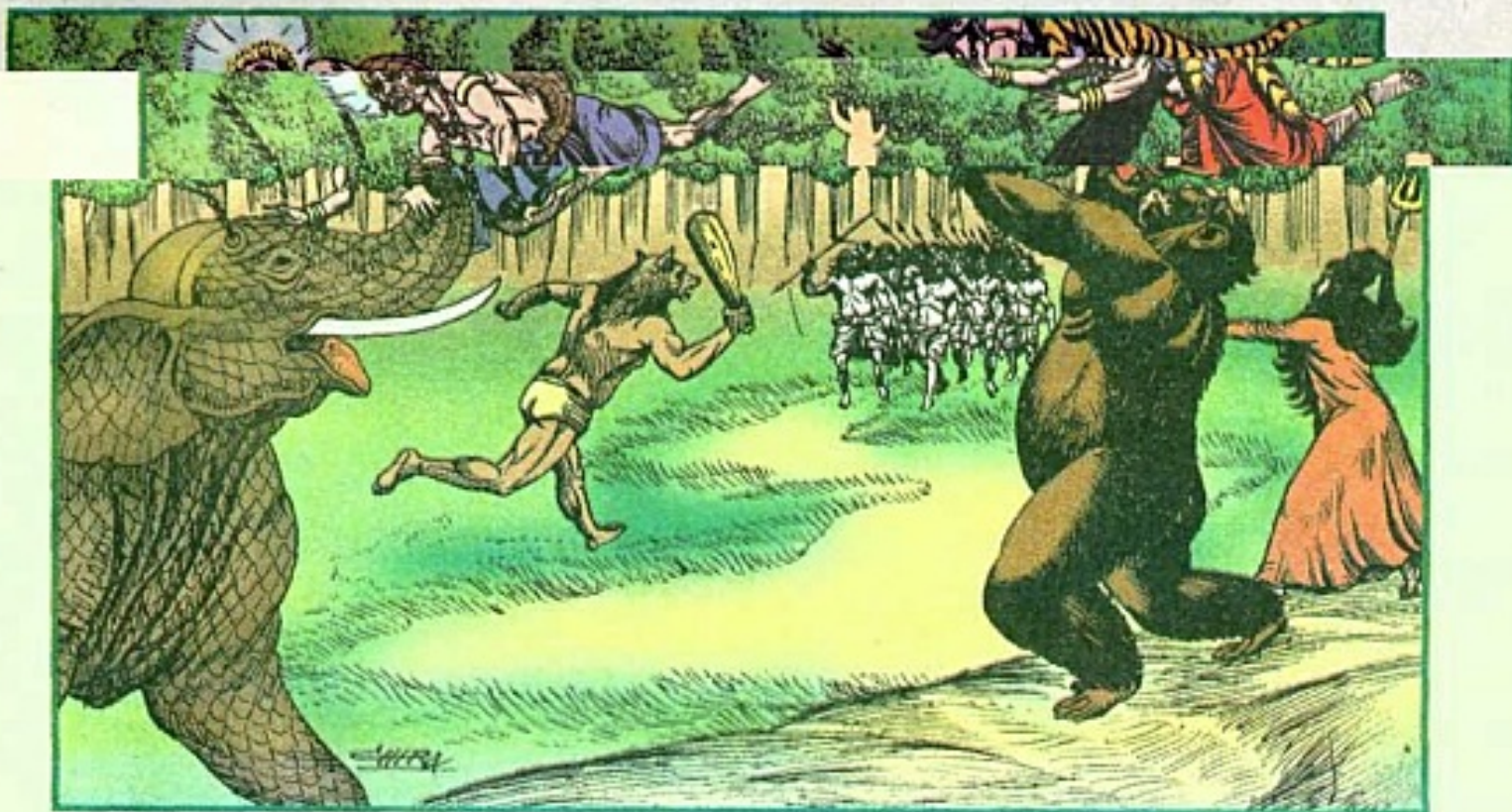
गणाचारी की कमर पकड़कर ऊपर उठाये घुमाने लगा। सरदार शेरसिंह और गणाचारी चीख़ते-चिल्लाते अपने अनुचरों को आदेश देने लगे, ''हमारे आहार बने इन मानवों को मत छोड़ो। भालों से चुभो-चुभोकर इन्हें बंदी बनाओ।''

''जलवृक ! देखते क्या हो? इन नर भक्षी लोगों को अपने गदे से चकना चूर कर दो।'' यों सिद्धसाधक ने जलवृक राक्षस को ललकारा।

जलवृक राक्षस ने ''सिद्धसाधक महाराज की जय !'' चिल्लाकर अपना गदा उठाया और नर भक्षी लोगों पर टूट पड़ा। नर भक्षियों ने उनका सामना किया। जलवृक राक्षस अंधा-धुंध नर भक्षी लोगों पर गदा का प्रहार करने लगा। नर भक्षी लोग अपने भालों से उसे घायल बनाने की कोशिश करते हुए चिल्लाने लगे। उस कोलाहल से सारा जंगल गूँज उठा।

सिद्धसाधक ने देखा कि जलवृक राक्षस अपने प्राणों का मोह छोड़कर लड़ रहा है; इस पर उसकी तारीफ़ करते वह बोला, ''शाबाश ! जलवृक ! तुम पौरुषवान और हिम्मतवर भी हो ! मैं तुम्हारी मदद के लिए आ रहा हूँ।'' यों कहते नर वानर को आदेश दे शेरसिंह को दूर फेंकवा दिया। तब 'महाकाल की जय' पुकारकर शूल उठाये नर भक्षी लोगों की ओर अपने नर वानर को दौड़ाया।

इसके दूसरे ही क्षण दस अश्वारोही तेजी के साथ वहाँ पर आ पहुँचे और चिल्लाकर बोले, ''रुक जाओ ! यह राजा कनकाक्ष का आदेश है।''

अश्वारोहियों की चेतावनी सुनकर सिद्धसाधक और नर भक्षी लोग अपनी लड़ाई बंद करके आश्चर्य के साथ उनकी ओर ताकने लगे। पर माया सरोवरेश्वर आपाद मस्तक काँपते हुए बोला, ''मकरकेतु, हमें शीघ्र माया सरोवर पहुँचना उचित होगा न?''

ये बातें सुन सिद्धसाधक आँखें लाल करके बोला, ''अरे दुष्ट माया सरोवरेश्वर ! तुम कहीं भी भाग नहीं सकते ! तुम जिसे अपने लिए हित की बात समझते हो, वही तुम्हारे लिए अहित होने जा रही है। ख़बरदार !'' यों कहकर सिद्धसाधक ने उसके वक्ष पर अपना शूल टिका दिया।

(क्रमशः)

झूठी पंडित-सभाएँ

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया, पेड़ पर से शव को उतारा और अपने कंधे पर डाल लिया। फिर श्मशान की ओर बढ़ने लगा। तब शव के अंदर के वेताल ने कहा, "राजन्, तुमने सुखी जीवन बिताया। कोई ऐसा सुख नहीं होगा, जिसे तुमने न भोगा हो। फिर भी इस आधी रात को, वह भी श्मशान में इतने कष्ट क्यों झेल रहे हो? शव को भी ढोने का निकृष्ट काम बड़ी लगन और श्रद्धा के साथ कर रहे हो। कहीं ऐसा तो नहीं कि तुम्हारा कोई प्रतिद्वंद्वी है और उसे हराने के लिए तुम यह सब कर रहे हो। यदि ऐसा है तो सावधान रहो; क्योंकि वीर नामक एक महापंडित ने मदन नामक

एक झूठे पंडित से प्रतिस्पर्धा की और अपमानित हुआ। मैं उस पंडित की कहानी सुनाने जा रहा हूँ। थकावट दूर करते हुए उसकी कहानी ध्यान से सुनो।'' फिर वेताल पंडित की कहानी यों सुनाने लगा :

ग्रामाधिकारी पारिजात की तीव्र इच्छा अपने आपको महापंडित कहलाने की थी। इसलिए वह हर दिन अपने गाँव में सभा चलाता था और उसमें पुराणों की विशेषताओं पर और वेदों पर प्रकाश डाला करता था। ग्रामीण अपने संदेह पूछते रहते थे और वह उनके उत्तर भी देता रहता था।

एक दिन किसी काम पर मदन नामक एक युवक उस गाँव में आया। शामको जब सभा चल रही थी, तब वह भी उसमें उपस्थित हुआ। उस दिन पारिजात ग्रामीणों को गजेंद्र मोक्ष की कहानी सुना रहा था। जब कहानी पूरी हुई तब एक ग्रामीण ने पूछा, ''द्रौपदी, पांच पतियों की पत्नी है। उसे कैसे पतिव्रता कह सकते हैं?''

पारिजात ने हँसकर कहा, ''तुम्हारे प्रश्न में ही उत्तर है।'' तब एक और ग्रामीण ने पूछा, ''राम ने अकारण ही सीता को अरण्य में छोड़ दिया। वे कैसे आदर्श पति माने जा सकते हैं?'' ''सीता ने ही यह बात बतायी, इसलिए यह प्रश्न सीता से ही पूछना होगा,'' पारिजात ने कहा।

एक और ग्रामीण ने अपना संदेह व्यक्त करते हुए पूछा, ''शिव ने नृत्य की सृष्टि की, परंतु स्त्रियाँ ही पुरुषों से अधिक इसका अभ्यास करती हैं। ऐसा क्यों?'' ''यह सृष्टि का धर्म है। कमाई पुरुष
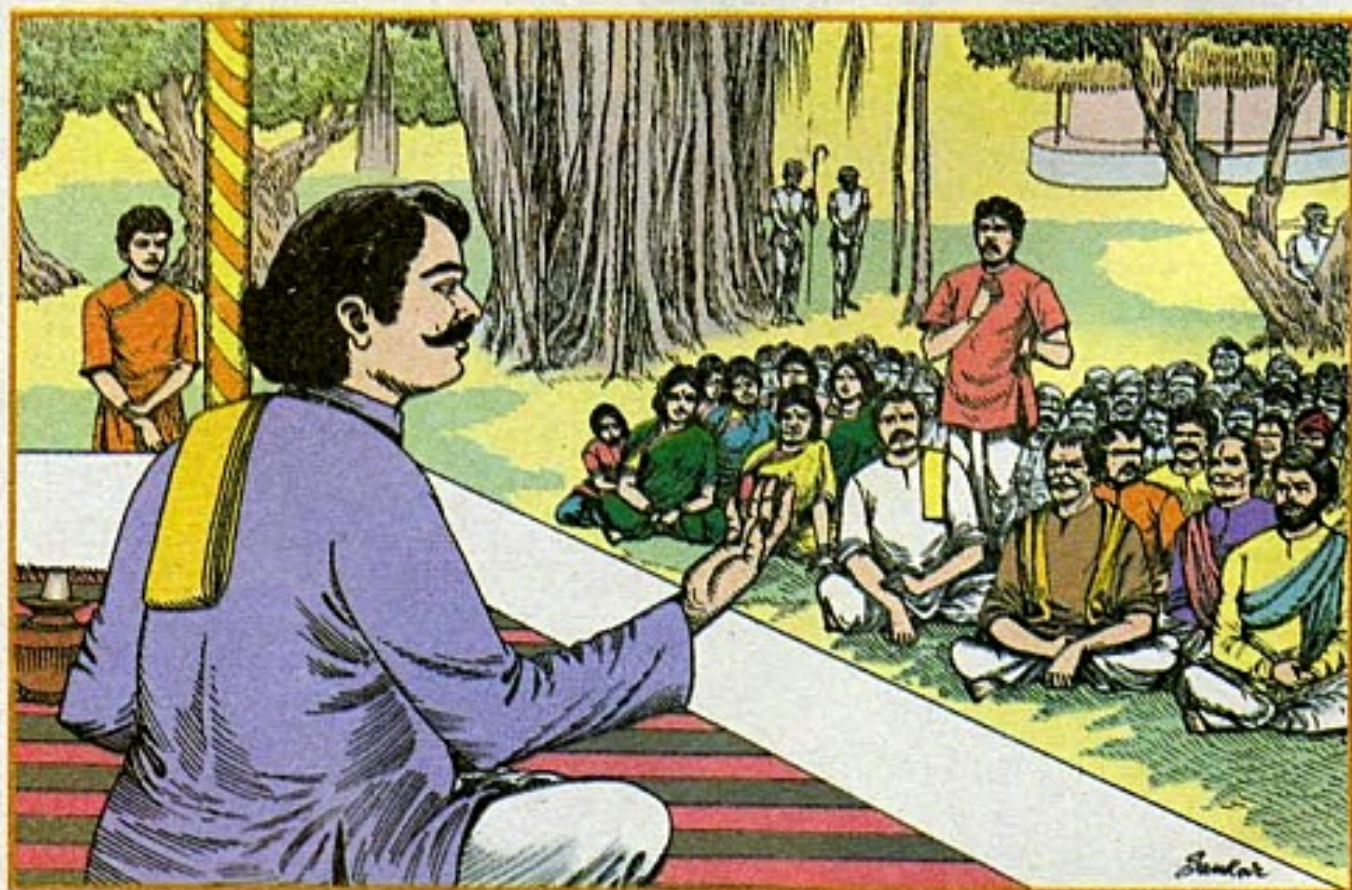
की है और व्यय करती है स्त्री,'' पारिजात ने कहा।

यों कितने ही प्रश्न पूछे गये। मदन को इस बात पर आश्चर्य हुआ कि किसी ने भी गजेंद्र मोक्ष के बारे में कोई प्रश्न नहीं किया। उसे पारिजात के उत्तरों पर भी आश्चर्य हुआ, क्योंकि उसने किसी भी प्रश्न का सही उत्तर नहीं दिया। फिर भी ग्रामीण उसके जवाबों से खुश थे।

वीर मदन का दूर का रिश्तेदार था। वह पारिजात से भी बड़ी-बड़ी कहानियाँ सुना सकता था। उसके उत्तर सहज, सरल व संगत लगते थे।

मदन को लगा कि वीर को इस गाँव में ले लायें तो अच्छा होगा, क्योंकि यहाँ के लोग पंडित गोष्ठियाँ बहुत पसंद करते हैं। उसने यह बात पारिजात से बतायी और कहा, ''महोदय, आपकी सभाएँ अद्‌भुत हैं। आपकी स्वीकृति हो तो मैं वीर पंडित को इस गाँव में ला सकता हूँ। वे मेरे दूर के रिश्तेदार भी हैं।''

''बड़े-बड़े पंडित सभा की शोभा को और बढ़ाते हैं। क्या आपका वीर भी इतना बड़ा पंडित है?'' पारिजात ने पूछा।

''यह तो मैं नहीं कह सकता। परंतु उन्हें एक बार राजसत्कार भी प्राप्त हुआ है,'' मदन ने कहा। वह कहना नहीं चाहता था कि वीर आपसे भी बड़ा पंडित है।

''राजसत्कार पाने के लिए पांडित्य से भी अधिक आवश्यक है, राजा के आस्थान के प्रसिद्ध लोगों से परिचय। पंडितों की असली प्रतिभा तो ऐसी ही सभाओं में प्रकट होती है। वीर को अवश्य
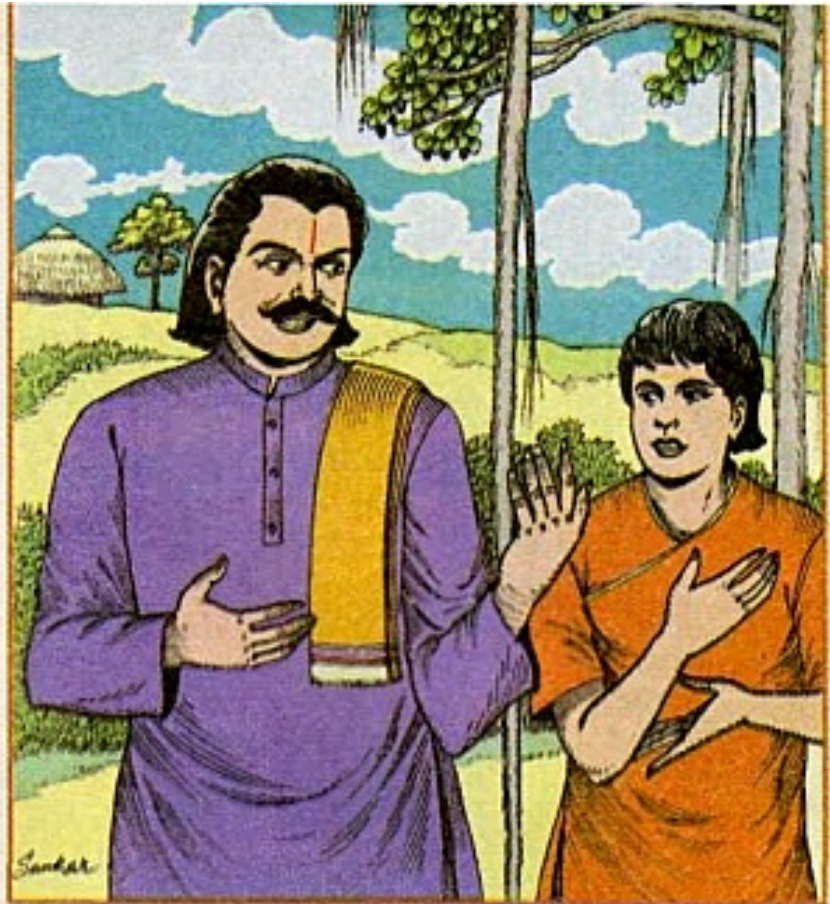
बुलवाइये,'' विश्वास भरे स्वर में पारिजात ने कहा।

मदन जब गाँव लौटा तब उसने वीर को यह बात बतायी। इस पर वीर ने कहा, ''मुझे इस पर आश्चर्य होता है कि आसपास के गाँवों में सभाओं में श्रद्धा-भक्ति रखनेवाले लोग मौजूद हैं। मैं अवश्य पारिजात से मिलूँगा।''

कुछ दिनों के बाद मदन और वीर पारिजात के गाँव गये। पंडित सभा जो आयोजित हुई, उसमें वीर ने गजेंद्र मोक्ष की कथा बड़े ही रोचक ढंग से सुनायी। अब मदन को स्पष्ट ज्ञात हुआ कि पारिजात की कथा में और इस कथा में कितना भेद है। पर ग्रामीणों में से किसी ने भी कोई सवाल नहीं पूछा।

''इसका यह मतलब हुआ कि किसी भी ग्रामीण को इस कथा को लेकर कोई संदेह नहीं

हुआ। वीर ने इसके लिए कोई मौक़ा ही नहीं दिया।'' मदन ने पारिजात से कहा।

''ऐसी कोई बात नहीं। मैं जब कहानी सुनाता हूँ, ग्रामीण उसे आसानी से समझ जाते हैं। ऐसा समझ जाने पर ही संदेह उत्पन्न होते हैं। अब मैं इन्हें रुक्मिणी विवाह कथा सुनाता हूँ। तुम ही देखना कि वे कितने संदेह प्रकट करते हैं,'' पारिजात ने कहा। फिर उसने ग्रामीणों को रुक्मिणी विवाह कथा सुनायी। एक के बाद एक ग्रामीण ने अपने संदेह पूछे। परंतु वे सारे संदेह ऋष्यशृंग को लेकर थे। पारिजात ने जो उत्तर दिये, वे भी पूर्ववत् अर्थहीन थे।

इस पर आश्चर्य प्रकट करते हुए वीर ने मदन से कहा, ''इन लोगों ने रुक्मिणी विवाह की कथा सुनी और ऋष्यशृंग को लेकर प्रश्न पूछ रहे हैं। यह तो बड़ी ही विचित्र बात है। तुमने तो कहा था कि पहले भी ऐसा हुआ है। ग्रामीणों ने गजेंद्र मोक्ष की कथा सुनी और प्रश्न पूछने लगे महाभारत व रामायण को लेकर। लगता है, ये ग्रामीण और पारिजात या तो पहुँचे हुए वेदांती हैं या निरे मूर्ख। इस समस्या का समाधान तभी संभव है, जब पंडित सभा किसी और गाँव में संपन्न हो।''

मदन ने पारिजात से असली बात छिपायी और उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। उसने पारिजात को नामवर गाँव में पंडित सभा बुलाने के लिए मनाया।

नामवर की सभा में लोग बड़ी संख्या में आये। वीर ने जब कुंती की कथा बतायी तब सब लोगों ने ध्यानपूर्वक सुनी। परंतु जैसे ही पारिजात ने भक्त प्रह्लाद की कथा सुनायी, श्रोता वामनावतार के बारे में प्रश्नों की बौछार करने लगे। पारिजात ने पूर्ववत् अर्थहीन उत्तर दिये।

वीर को यह बहुत ही विचित्र लगा। इसके बाद निशापुर में एक और पंडित सभा का आयोजन किया गया। वहाँ भी ऐसा ही हुआ। वीर की कथा बताने की पद्धति श्रोताओं में उत्साह पैदा नहीं कर सकी, जिसपर उसे बड़ी निराशा हुई। अंतिम प्रयत्न के रूप में जागृतिपुर में एक और सभा चलाने का उसने निश्चय किया।

जागृतिपुर में इसके पहले वीर का भव्य सम्मान हुआ था। उसे आशा थी कि इस गाँव में लोग उसे पारिजात से बड़ा पंडित मानेंगे और उसका मान रखेंगे। उसने आवश्यक प्रबंध करने के लिए मदन को जागृतिपुर भेजा। मदन जब ग्रामाधिकारी

से मिला तब नाराज़ होते हुए उसने कहा, ''लोगों को इस बात का दुख है कि हमने वीर का सम्मान किया? वे महसूस करते हैं कि ऐसा करके उन्होंने बड़ी गलती की। उनका इस गाँव में क़दम रखना उनके लिए श्रेयस्कर नहीं होगा।''

''महाशय, वीर के विषय में आप ग़लत कहते हैं। चूँकि पारिजात के हाथों वे हार गये, इसलिए आप उनका अनादर कर रहे हैं। इसका कारण उन ग्रामीणों में भरा अज्ञान है। उस अज्ञान के सहारे पारिजात अपने ज्ञान पर गर्व कर रहे हैं। उनके गर्व को चूर-चूर करने की क्षमता केवल जागृतिपुर के ग्रामीणों में ही है। इसी कारण हम पारिजात और वीर के बीच स्पर्धा चलाना चाहते हैं।''

ग्रामाधिकारी ने चिढ़ते हुए कहा, ''फिर वही बातें दुहराते जा रहे हो। हम जानते हैं कि पारिजात में नाम मात्र के लिए भी पांडित्य नहीं है। उसमें अपने को महान पंडित कहलाने की दुराशा है। इसीलिए वह पंडित सभाएँ चलाता रहता है। चूँकि वह ग्रामाधिकारी है, इसलिए अपने अधिकार बल के सहारे वह अपने लोगों की सहायता कर सकता है। जिन्हें वह नहीं चाहता, उन्हें वह कष्ट पहुँचा सकता है। इसी कारण सब लोग उससे अच्छा व्यवहार करते रहने का नाटक करते हैं। ऐसे लोग उसकी पंडित सभा में लाचार होकर भाग लेते हैं। जिस किसी भी गाँव में पंडित सभा होती है, वे भी उसके साथ-साथ जाते हैं। वे अपनी हाज़िरी जाहिर करने के लिए ही जान-बूझकर सवाल करते रहते हैं। यही है, पारिजात की सभाओं का रहस्य।''

ये विवरण सुनकर मदन भौचक्का रह गया।
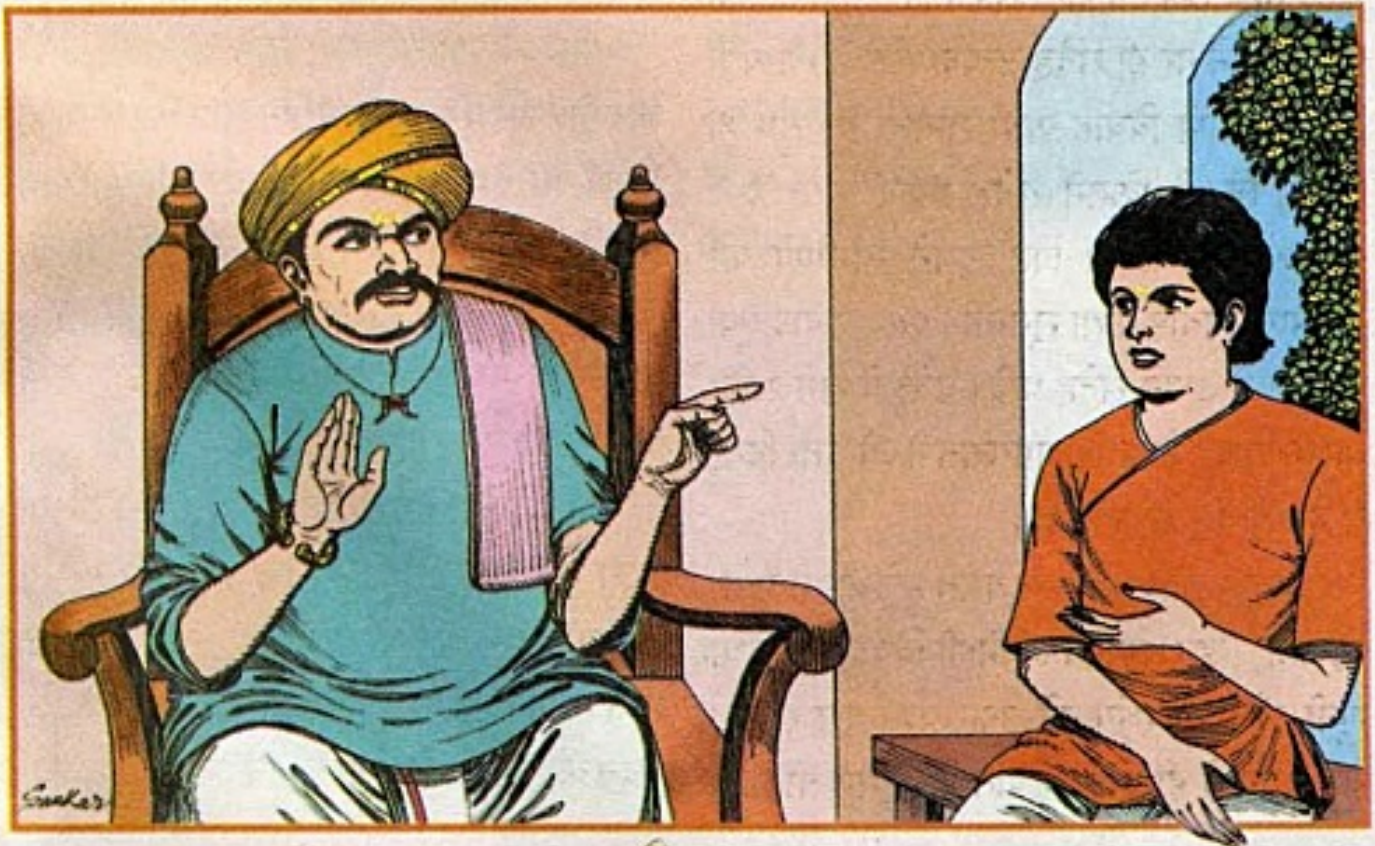
उसने ग्रामाधिकारी से कहा, ''महोदय, यह तो ठीक है, पर वे लोग पारिजात की कही कथा से प्रश्न न पूछकर बेतुके सवाल क्यों करते हैं?''

ग्रामाधिकारी ने फिर चिढ़ते हुए कहा, ''पारिजात की कहानियाँ सुनना ग्रामीण पसंद नहीं करते। इसलिए किसी और कथा को लेकर, उसी में मग्न होकर, वे सोचते हुए बैठते हैं। पारिजात जब कथा समाप्त करता है, तब वे ऐसे प्रश्न पूछने लगते हैं, जिनके बारे में अब तक वे सोचते रहे। सच कहा जाये तो पारिजात को भी सही उत्तर मालूम नहीं। ग्रामीण उससे सही उत्तर की आशा भी नहीं करते। इसलिए वे उसके सभी उत्तरों की वाहवाही करते हैं।''

वेताल ने इस कहानी को सुनाने के बाद अपने संदेह व्यक्त करते हुए पूछा, ''राजन्, जागृतिपुर के ग्रामाधिकारी को पारिजात के बारे में पूरा-पूरा मालूम है। उसने बताया भी कि अपने को पंडित कहलाने के लिए वह क्या-क्या कपट नाटक कर रहा है। इतना जानते हुए भी उसने वीर को गाँव में क़दम रखने से मना किया। क्या यह महापंडित का अपमान करना नहीं? पहले तो ग्रामाधिकारी वीर का बड़ा आदर करता था, पर भला क्यों अब उस पर इतना नाराज़ हो गया? उसके नाम से उसे क्यों चिढ़ हो गयी? मेरे इन संदेहों के उत्तर जानते हुए भी मौन रह जाओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।''

विक्रमार्क ने कहा, ''जागृतिपुर का ग्रामाधिकारी महापंडित वीर को बहुत चाहता है। उसके प्रति उसके हृदय में आदर की भावना कूटकूटकर भरी हुई है। इसीलिए वह नहीं चाहता कि वीर उसके गाँव में प्रवेश करे। वीर पंडित अवश्य है, पर उसमें व्यावहारिक ज्ञान नहीं है। झूठे पंडितों की बुरी-बुरी चालों को समझने की उसमें शक्ति नहीं है। इसी कारण झूठे पंडित से स्पर्धा में उसने अपनी हार मान ली। ग्रामाधिकारी नहीं चाहता था कि ऐसे झूठे पंडित से मुक़ाबला एक और बार महापंडित वीर का हो और उसके पांडित्य की प्रतिभा में धब्बा लगे। यह सब कुछ उसने किया वीर की भलाई के लिए। जो भी हो, दुष्ट से दूर रहना अच्छा ही तो है।

सोला से बने नरम खिलौने

क्या तुम समझते हो कि नरम खिलौने भारत के लिए नये हैं? नहीं, शिशु-अनुकूल नरम खिलौने यहाँ अनेक शताब्दियों से हैं। नहीं, आज के टेडिज़ और बन्नीज़ नहीं जो फेल्ट और कृत्रिम भराई से बने होते हैं।

ये पुराने खिलौने पौधे के रेशे से बनाये जाते हैं और थरमोकोल की तरह हल्के होते हैं। और तो और, ये खिलौने दे सकने लायक कीमत पर मिल जाते हैं।

सोला एक प्रकार का सरकण्डा है जो दलदल में उपजता है। पश्चिमं बंगाल में यह प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। बंगाली कारीगर इसे अनेक प्रकार के शिल्पतथ्य बनाने में प्रयोग में लाते हैं।

सरकण्डे की बाहरी सख्त भूरी परत के हटते ही श्वेत नरम भाग दिखाई देता है। इसे काट-छाँटकर और संवार कर खिलौनों के निर्माण, सजावट तथा अन्य कारीगरी की वस्तुओं में प्रयुक्त किया जाता है। आजकल खिलौनों को चटकीले रंगों में रंगा जाता है।

अंग्रेजों के ज़माने में सोला का प्रयोग भारत की तपती धूप से अंग्रेज साहेबों के सिर को बचाने के लिए टोपी बनाने में किया जाता था।

क्या तुमने बंगाल में दुर्गा पूजा के समय हाथी दाँत के रंग की सजावटों से सजी दुर्गा तथा अन्य देवी-देवताओं की पतिमाओं को देखा है? वे सोला से बनी होती हैं।

तोपोर अथवा शिरस्त्राण जो बंगाली हिन्दू दुल्हा पहनता है और दुल्हन का मुकुट सरकण्डे से ही बनाये जाते हैं।

वह, जो कर्ज़ नहीं देता

आनंद नया-नया शिवपुर आया था। उसने उस गाँव में चार एकड़ खेत और दूध देनेवाली दस गायें ख़रीद लीं। उसने सोचा कि खेती और दूध का व्यापार करते हुए यहाँ आराम से ज़िन्दगी गुज़ारूँ। अचानक उसकी बेटी की शादी भी पक्की हो गई। दुल्हेवाले ज़ोर देने लगे कि जितनी जल्दी हो सके, यह शादी हो जानी चाहिए।

''एक साल के बाद बेटी की शादी होती तो मुझे कोई तक़लीफ नहीं होती। धन के लिए मुझे दौड़-धूप नहीं करनी पड़ती। मेरे पास तुरंत शादी कराने के लिए इतनी बड़ी रक़म नहीं है। कम से कम दो सौ अशर्फ़ियाँ कर्ज़ में लेनी होंगी। यह गाँव तो मेरे लिए नया है, कौन यहाँ मुझे कर्ज़ देगा?'' आनंद ने पत्नी से चिंतित होकर कहा।

आनंद की पत्नी राजेश्वरी ने पता लगाया तो उसे मालूम हुआ कि इस गाँव में दो सूदख़ोर हैं। उसने पति से कहा, ''एक का नाम पूरन है, वह खेत को गिरवी में रखकर कर्ज़ देता है। दूसरे सूदखोर का नाम है, सूरज। वह सोना गिरवी में रखकर कर्ज़ देता है।''

परंतु आनंद ने सोचा कि दो सौ अशर्फ़ियाँ कोई बड़ी रक़म नहीं है, इसलिए उसकी बात का विश्वास करके कोई यह रक़म कर्ज़ पर दे तो अच्छा होगा। वह खेत गिरवी पर रखने के पक्ष में नहीं था। विवाह जैसे शुभ अवसरों पर औरतें गहनें पहनती हैं, इसलिए गहने भी गिरवी में रखने के पक्ष में वह नहीं था। बिना गिरवी के कोई कर्ज़ देने को तैयार हो तो वह जितना भी सूद क्यों न ले, वह देने को तैयार है।

आनंद की समस्या को जानने के बाद पड़ोसी यादव ने कहा, ''इस गाँव में गिरवी में रखे बिना कोई भी कर्ज़ नहीं देता। परंतु पास ही के एक गाँव में परंधाम है, जो व्यक्ति को न जानते हुए भी कर्ज़ देता है। अगर तुम्हें दो सौ अशर्फ़ियाँ चाहिए तो छः महीनों के बाद चार सौ अशर्फ़ियाँ देनी होंगी। इसके लिए तुम तैयार हो तो उससे मिलो।''

- लक्ष्मण प्रताप -

आनंद की समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। तभी तीस साल का एक युवक वहाँ आया। एकदम सफ़ेद कपड़े पहना हुआ था। गोरे रंग का छरहरा था। उसने यादव को संबोधित करते हुए कहा, ''यादव जी, क्या बात है? हफ़्ते भर में लौटाने का वचन दिया आपने और दो महीनों के बाद भी वे एक सौ अशर्फ़ियाँ नहीं लौटायीं। ढूँढ़ने पर भी आप कहीं नज़र नहीं आते। मैंने थोड़े ही वह रक़म लौटाने पर ज़ोर दिया! आप यथावत् हमारे घर आते-जाते रहियेगा।'' फिर वह चला गया।

आनंद ने उत्सकुता-भरे स्वर में पूछा, ''ये साहब कौन हैं?''

''इनका नाम वल्लभ है। आदमी बहुत अच्छे हैं। संपन्न हैं। ज़रूरतमंद की मदद करते हैं। किसी भी हालत में ब्याज नहीं माँगते,'' यादव ने उस युवक के बारे में बताया।

''आप उनका परिचय मुझसे कराते तो अच्छा होता,'' तुरंत आनंद ने कहा। यादव ने संकोच करते हुए कहा, ''परिचय अवश्य कराता। पर वल्लभ भिन्न स्वभाव का है। जो कहना चाहता है, साफ़ कह देता है। हम लंबे अर्से से एक दूसरे को जानते हैं, इसलिए कभी कुछ कहे भी, तो चुप रह जाते हैं। परंतु नये लोगों को उसकी बातों से झटका लगेगा। वह सबको कर्ज़ नहीं देता। कर्ज़ लौटाओ या न लौटाओ, दोनों तरफ़ से बेचैनी है। ऐसे तो हमलोग उसे भली भाँति जानते हैं, पर उससे कर्ज़ लेने में
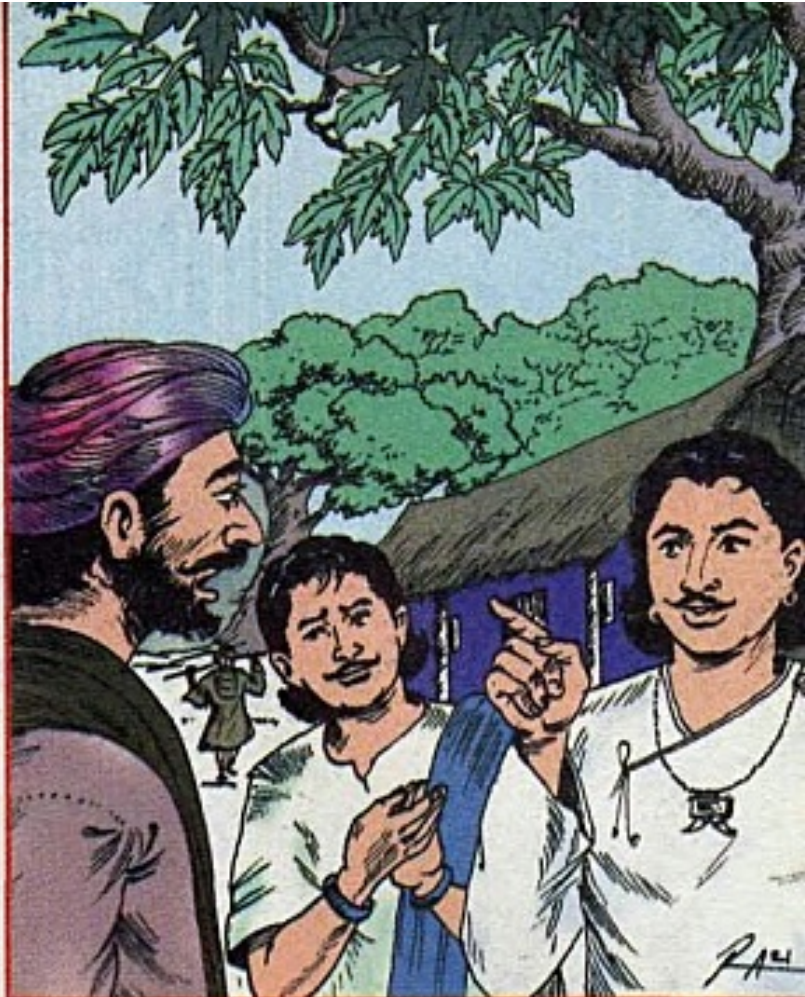
संकोच करते हैं।''

''कर्ज़ देने पर वादे के मुताबिक लौटा दूँगा। इसलिए उनसे कर्ज लेने में मुझे कोई संकोच नहीं होगा। कर्ज़ न दे तो इसमें परेशानी की क्या बात है?'' आनंद ने आश्चर्य भरे स्वर में पूछा।

''तुम उस अनुभव से गुजरो तभी इसका अर्थ समझ पाओगे,'' यादव ने कहा। आनंद को यादव की बातों पर विश्वास नहीं हुआ। उसने निर्णय कर लिया कि वल्लभ से सहायता वह लेगा। उसी दिन शामको वह उसके घर गया।

उस समय वल्लभ और उसके पिता घर के चबूतरे पर बैठकर किसी बात को लेकर वाद-विवाद कर रहे थे।

''आप ही ने खरीदने के लिए दबाव डाला। वह भी मेरे पूछने पर। आपने ज़ोर दिया कि मेरी
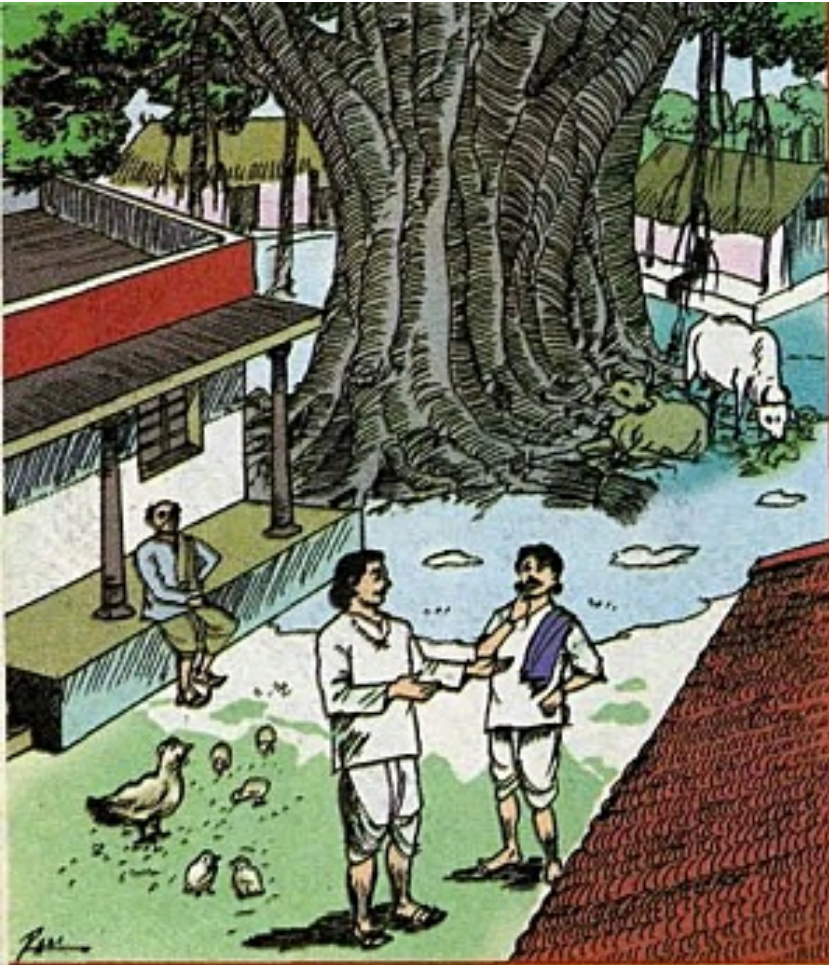
ही इच्छा के मुताबिक सब कुछ होना चाहिए और मैंने यह शर्त भी मान ली। इतना सब कुछ होने के बाद भी मैंने भैंसा खरीदा। आपके मन को दुखाया, इसका मुझे बड़ा खेद है।'' वल्लभ कह रहा था।

''बेटे, तुमने सलाह माँगी तो मैंने दी। मुझे तुम्हारे विवेक पर विश्वास है। जो भी तुम करो, मुझे खुशी होती है। बेकार चिंतित मत होना।'' पिता कह रहा था।

आनंद ने उन दोनों की बातें सुन लीं। उसने अपने आप सोचा, ''वल्लभ का मन बड़ा ही कोमल है। ऐसे अच्छे आदमी के बारे में यादव ने ऐसा क्यों कहा?''

इतने में वल्लभ ने आनंद को देखा और बातचीत बंद कर दी। वल्लभ ने अपना परिचय खुद देते हुए कहा, ''मैंने आपका नाम सुना। आज सबेरे आपको यादव के साथ देखा। अपना परिचय खुद देने में मुझे संकोच होता है। पर ज़रूरत आ पड़ी, इसलिए अपने बारे में खुद बताना पड़ रहा है,'' आनंद ने अपने बारे में बताते हुए वल्लभ से धन की सहायता माँगी।

वल्लभ ने तुरंत कहा, ''मैं इसका जवाब तुरंत दे रहा हूँ, इसके लिए बुरा मत मानिये। मैंने खूब सोचने के बाद कुछ नियमों के पालन का निर्णय लिया। उन नियमों के अनुसार नयों का परिचय कर्ज़ से शुरू होना नहीं चाहिए। आपकी आवश्यकता न्यायसंगत है। आपकी बेटी की शादी के लिए मैं सहायता करूँगा तो उससे पुण्य भी मिलेगा। आपकी सहायता न कर पाने की वजह से मुझे बहुत दुख हो रहा है।''

आनंद निराश होकर घर लौटा। तब तक उसका बड़ा भाई विनोद आया हुआ था और उसी का इंतज़ार कर रहा था। भाई को देखते ही उसने कहा, ''सुना कि बिटिया की शादी के लिए रक़म की ज़रूरत है। आजकल मेरी हालत में काफ़ी सुधार हुआ है। मेरी आमदनी में पर्याप्त वृद्धि हुई है। तुम्हें एक हज़ार अशर्फ़ियाँ देने ही यहाँ आया हूँ। जब दे पाओगे, लौटा देना।''

समस्या यों सुलझ गयी, इस पर आनंद को खुशी हुई। उसने तुरंत बड़े भाई के चरण छूए और सीधे मंदिर गया।

मंदिर के पास वल्लभ उससे मिला और कहा,

''आप भगवान के दर्शन करने आये हैं। आपको कर्ज़ न देने पर मुझे बहुत दुख हो रहा है। मुझे मालूम है कि मेरे इनकार कर देने पर आपके मन को कितना कष्ट पहुँचा होगा। मेरे पास धन है, परंतु नियमबद्ध होकर मुझे इनकार करना पड़ा। मन की शांति के लिए भगवान के दर्शन करने आया हूँ। परंतु यह चिंता मुझे जीवन भर पीछा करती रहेगी।''

आनंद ने कहा, ''आप क्यों व्यर्थ चिंतित होते हैं। एकदम अपरिचित से कर्ज़ माँगना मेरी ही ग़लती है। आपने कर्ज़ देने से इनकार कर दिया, यह बिलकुल उचित और संगत है।''

''आप मुझसे कर्ज़ माँगना ग़लती समझ रहे हैं। इसका यह मतलब हुआ, मेरे व्यवहार पर आपके दिल को ठेस पहुँची है। इसीलिए मन की शांति के लिए आप मंदिर आये। मेरा अंदाज़ा ठीक है न?'' वल्लभ ने पूछा।

तब आनंद ने उसे बताया कि उसके बड़े भाई ने समय पर सहायता पहुँचायी। इस पर वल्लभ ने कहा, ''हमेशा अच्छे लोगों के साथ अच्छाई ही होती है। अब यह साबित हो गया कि आप अच्छे आदमी हैं। पर दुख तो इस बात का है कि मैं एक अच्छे आदमी की मदद नहीं कर पाया। अब तो मेरा दुख दुगुना हो गया।''

आनंद को वल्लभ को यह समझाने में बहुत देर लगी कि वह उसके व्यवहार से असंतुष्ट नहीं है, उल्टे वह अब बहुत खुश है।

इसके दो दिनों के बाद वल्लभ और आनंद

की मुलाक़ात कपड़ों की एक दुकान में हुई। वल्लभ को लगा कि आनंद कम दाम के कपड़े खरीद रहा है तो उसने कहा, ''माँगते ही मैं रक़म दे पाता तो आप और अच्छे कपड़े खरीद पाते।''

यों जब कभी भी दोनों मिलते, वल्लभ यह कहते हुए दुख प्रकट करता रहता कि मैं आपको कर्ज़ नहीं दे पाया।

आनंद ने अपनी बेटी की शादी पर वल्लभ और उसके परिवार को आमंत्रित किया। तब वल्लभ कहने लगा, ''धन के होते हुए आपको दे नहीं सका। मैंने आपको कर्ज़ नहीं दिया, फिर भी आपने हमें आमंत्रित किया।''

उधर शादी हो रही थी तब भी वल्लभ अपनी अशक्तता पर दुख प्रकट करता जा रहा था। उसे

शांत करने के लिए आनंद को बहुत मेहनत करनी पड़ी। इतनी मेहनत दुल्हेवालों की आवभगत में भी उसे करनी नहीं पड़ी।

उस समय आनंद का बड़ा भाई वहाँ आया और कहने लगा, ''अरे आनंद, अभी-अभी मुझे मालूम हुआ कि दुल्हे की बड़ी बहनों और छोटी बहनों को व उनके पतियों को भी नये कपड़े और अंगूठियाँ हमें देनी चाहिए। उनका कहना है कि यह उनका रिवाज है। वे इस बात पर खलबली मचा रहे हैं कि तुमने केवल कपड़े ही दिये, अंगूठियाँ नहीं दीं।''

''मेरी समझ में नहीं आता, अब क्या करें। जितना धन था, सब खर्च हो गया।'' आनंद ने अपनी परेशानी व्यक्त की।

वल्लभ ने तुरंत कहा, ''जब आपने मुझसे रक़म माँगी, तभी दे देता तो आपको इतना परेशान होने की ज़रूरत नहीं पड़ती। अपने नियम के कारण मैं आपकी मदद नहीं कर सका। आपकी सारी परेशानियों की जड़ मैं हूँ।'' वह यों बारंबार अपना दुख प्रकट करने लगा।

तब विनोद ने दखलंदाज़ी करते हुए कहा, ''कर्ज़ के साथ परिचय होना नहीं चाहिए, यही आपका नियम है न? अब आप मेरे भाई के सुपरिचित मित्र हैं। फिर संदेह क्यों? दो सौ अशर्फ़ियाँ अब आप कर्ज़ में दे सकते हैं। यह आपके नियम के ख़िलाफ़ नहीं है। विवाह भी हो जायेगा और आपको भी इससे खुशी होगी।''

''ऐसी बात है ! हाँ, आपने ठीक कहा। मैं अभी आया।'' कहता हुआ वल्लभ वहाँ से खिसक गया।

जो हुआ, उस पर निस्तेज खड़े आनंद से विनोद ने कहा, ''उससे तुम्हारा पिंड छुड़ाने के लिए ही मैंने यह नाटक किया। मुझे विश्वास है कि अब से वह तुमसे मीलों दूर रहेगा। मैंने ही जान-बूझकर दुल्हेवालों पर यह दोष थोपा। घबराना मत।''

इसके बाद विवाह संपन्न हुआ। तब से वल्लभ उससे मिलने आया ही नहीं और उसने सबको चिढ़ानेवाली यह आदत भी छोड़ दी कि मैं रक़म देकर आपकी सहायता नहीं कर सका।

चोर के लिए कोई निकास नहीं
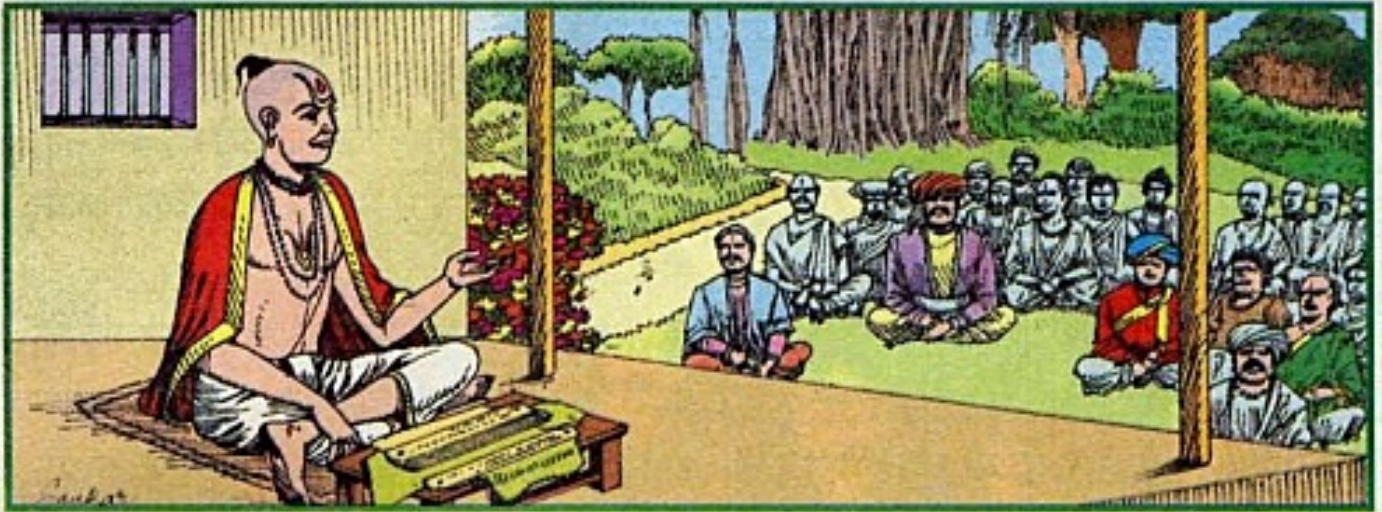
महान संत और कवि तुलसीदास का वाराणसी में एक छोटा-सा आश्रम था। उनके कुछेक शिष्य थे जो उनकी निष्ठापूर्वक सेवा करते थे। लेकिन उनका अधिकांश समय अमर महाकाव्य *राम चरित मानस* अथवा राम कथा लिखने में व्यतीत होता था। उनका काव्य मनोरम था। लिखते समय वे पंक्तियों को मंद स्वर में गाते भी रहते थे। जो भी उनके गीति-काव्यों को सुनता, वहाँ से उठने का उसका जी नहीं चाहता। उनके अनेक प्रशंसक उनके मिट्टी के बने कमरे के बाहर घण्टों बैठकर उनकी कविता सुनते रहते थे।

तुलसीदास के आश्रम के निकट टीमा चोर रहता था। वह अनेक बार नगर के पहरेदारों द्वारा रंगे हाथ पकड़ा गया था और सजा भी काट चुका था। पर जेल से बाहर होते ही चोरी की बुरी आदत का पुनः शिकार हो जाता था।

टीमा को यह देखकर आश्चर्य होता था कि आश्रम के फाटक और कमरों के दरवाजे हमेशा खुले रहते हैं। अपनी उत्सुकता को रोक पाना उसके लिए कठिन हो जाता था। एक बार जब कुछ भक्त संत के दर्शन करने आये तब उसने उनका पीछा किया। कुछ भक्त व्यापारी थे और अपने साथ पैसे लेकर नगर में आये थे। लेकिन जब वे आश्रम में निश्चिन्त होकर विश्राम करने लगे तो उन्हें पता न चला कि वे क्या लेकर आये हैं। वे अपने थैले संत की कुटिया के एक कोने में रखकर संत का काव्यपाठ सुनने लगे।

टीमा भी उनके पीछे बैठ गया लेकिन उसकी

नजर व्यापारियों के थैलों पर थी। पता नहीं कब उसका ध्यान भी संत के शब्दों पर एकाग्र हो गया। उनका संगीतमय काव्यपाठ इतना मोहक था कि शीघ्र ही वह भूल गया कि वह आश्रम में क्यों आया था।

टीमा दूसरे दिन भी आश्रम में आया और फिर हर रोज आने लगा। आश्रमवासियों के लिए वह जाना-पहचाना हो गया। हरेक व्यक्ति यही समझने लगा कि वह संत के परम पूज्य भगवान राम का सच्चा भक्त और संत की कविताओं का प्रेमी है। फिर भी, टीमा कुछ धन लेकर भाग जाने के मौके की ताक में था।

एक दिन दोपहर के बाद उसकी खुशी का ठिकाना न रहा जब उसने देखा कि निकट के एक शहर सारनाथ से एक सेठ आया और संत के साथ कुछ देर बैठा। आश्रम के कुछ लोगों से उसे पता चला कि वह कुछ मूल्यवान वस्तुएँ खरीदने आया है, लेकिन सन्ध्याकाल शिव मंदिर में आयोजित एक उत्सव में भाग लेगा और रात्रि में आश्रम में विश्राम करेगा।

टीमा के लिए यह एक सुनहला अवसर था। उसे एक बार पहले सारनाथ में सेठ की कोठी में चोरी करने की कोशिश करते हुए सेठ के आदमियों ने खूब पीटा था। निस्संदेह सेठ उसे पहचान नहीं पायेगा। वह आराम से सेठ की चीज़ें लेकर चम्पत हो सकता है।

यह जानकर उसकी बाँछें और खिल गईं कि केवल सेठ ही नहीं, बल्कि सभी आश्रमवासी सन्ध्या होते ही उत्सव में भाग लेने चले जायेंगे। पूरे आश्रम में सन्त को छोड़ वह अकेला रह गया था। उसे अपने भाग्य पर विश्वास नहीं हो रहा था।

उस पर किसी को शक न हो, इसलिए वह सन्त के कमरे के सामने खड़ा हो गया। सन्त ने मुस्कुराते हुए उसे देखा और पूछा, ''क्या तुम मुझसे कुछ कहना चाहते हो?''

''जी हाँ, मैं घर जा रहा हूँ, लेकिन आश्रम में कोई नहीं है,'' उसने कहा। ''आप अकेले हैं।''

''कौन कहता है आश्रम में कोई नहीं है। घबराओ नहीं, तुम जा सकते हो, वत्स !''

''मैं कह रहा हूँ महानुभाव, सचमुच कोई नहीं है और सभी दरवाज़े खुले पड़े हैं, असुरक्षित,'' टीमा ने उत्तर दिया।

''किसने कहा कि सभी दरवाजे असुरक्षित खुले

पड़े हैं?'' सन्त ने कहा और वे अपने तालपत्रों के पास चले गये। प्रसन्न चित्त हो टीमा कुछ देर वहीं रुका रहा। चाँदनी रात थी। धीरे-धीरे चलकर उसने सेठ का थैला उठाया और एक फाटक की ओर बढ़ा।

लेकिन यह क्या है जो उसने देखा? धनुष-बाण और तरकश लिए फाटक के सामने कोई चहलकदमी कर रहा था। हो सकता है, टीमा ने सोचा, वह कोई अभिनेता होगा और उत्सव से लौटते हुए अपने साथियों की प्रतीक्षा कर रहा होगा। टीमा ने नजर बचाकर दूसरे फाटक से खिसकने की कोशिश की। परंतु यह क्या! वहाँ भी उसने वही दृश्य देखा। धीरे-धीरे टहलते हुए उस युवक में कुछ आश्चर्यजनक बात थी। उसकी ओर से आँखें हटा पाना टीमा के लिए कठिन था। लेकिन मंदिर से सेठ और उसके साथियों के वापस आने से पहले ही उसे रफ्फू-चक्कर हो जाना चाहिए।

वह बाहर जाने के तीसरे फाटक की ओर बढ़ा। किन्तु सतर्क युवक लगता है उसकी अगली चाल को समझ गया। वह वहाँ भी मौजूद था। कोई बात नहीं! बाहर जाने का चौथा फाटक भी है। वह तेजी से उसकी ओर बढ़ा। लेकिन वह दीप्तिमान आकृति वहाँ भी खड़ी थी।

''क्या हुआ तुम्हें? क्यों तुम एक के बाद दूसरे फाटक की ओर बढ़ने लगते हो?'' सन्त ने यह प्रश्न किया। उसे एक विचित्र अनुभूति ने अभिभूत कर लिया। वह मूर्छित हो गिर पड़ा। सन्त ने उसे उठाकर सचेत किया। ''महाराज, मैंने जो देखा, वह क्या है? वह विचित्र व्यक्ति कौन है, जो आपके आश्रम की रक्षा कर रहा है?''

''विचित्र क्यों, वत्स? क्या वह तुम्हारे अत्यन्त निकट नहीं है, वहाँ ठीक तुम्हारे हृदय के भीतर? निस्सन्देह वह राम हैं!''

टीमा रो पड़ा और सन्त के चरणों में गिर पड़ा। ''क्षमा कीजिए, महात्मन्, इस पापी को क्षमा कीजिए,'' बिलखता हुआ वह बोला।

''वत्स! तुम अब पापी नहीं हो। तुम धन्य हो, क्योंकि तुम्हें राम के भव्य दर्शन का सौभाग्य मिला है।'' सन्त ने कहा। टीमा सन्त के साथ एक श्रद्धालु सेवक बनकर सदा के लिए रह गया।
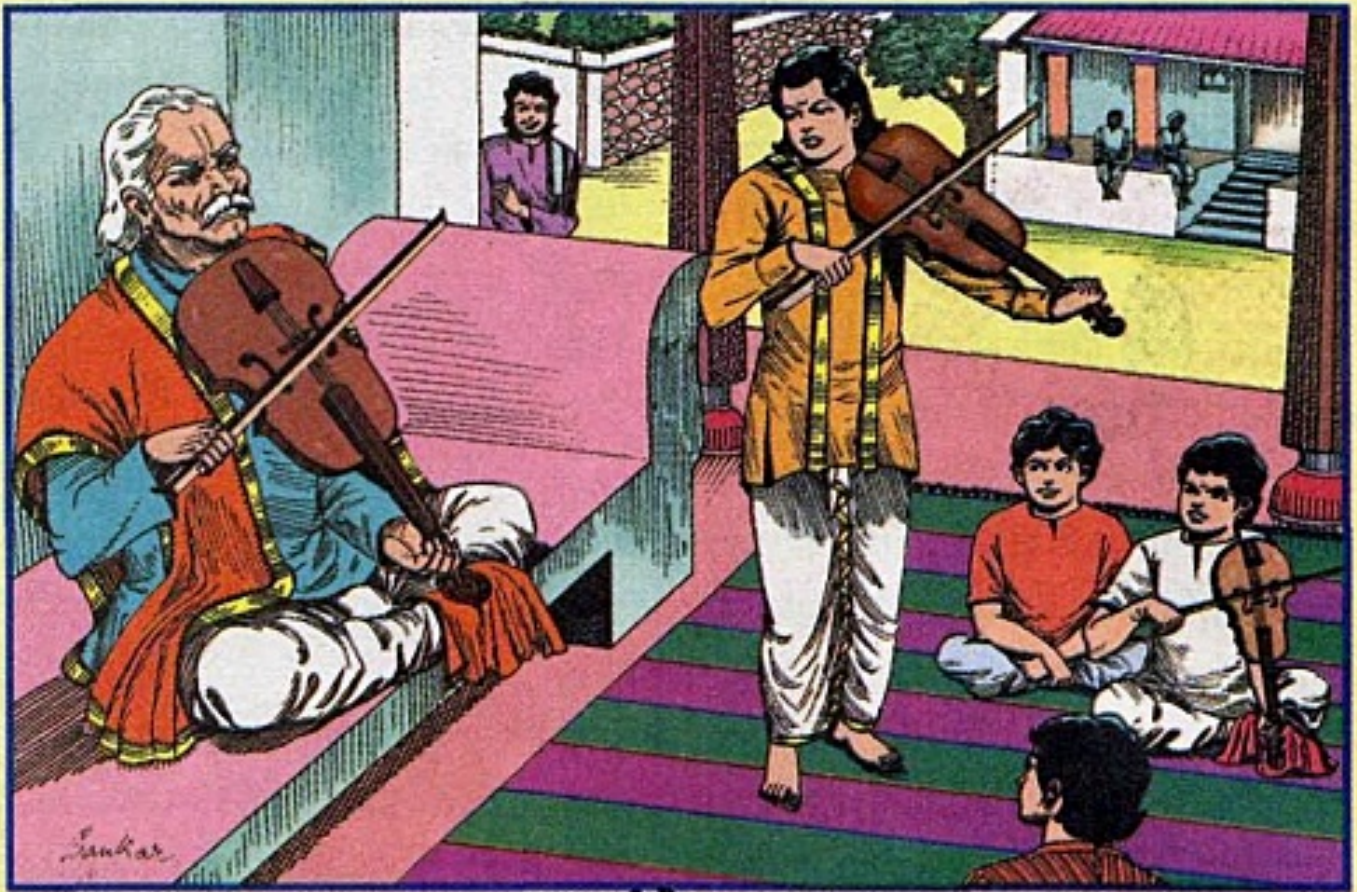
संदेह

चित्रलेखन सीखने की तीव्र इच्छा थी रमानाथ में। पर वह ऐसा नहीं कर पाया, क्योंकि इसके लिए परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं थीं। साथ ही उसमें लगन व श्रद्धा का अभाव था। चालीस साल की उम्र में भी उसकी इच्छा, इच्छा ही बनकर रह गयी।

पर अब परिस्थितियाँ उसके अनुकूल हो गयीं, समस्याओं का समाधान हो गया, फिर भी वह यह कला सीखने में संकोच करने लगा। उसे लगा कि इस उम्र में इस कला को सीखते देखकर लोग हँसेंगे और उसपर ताने कसेंगे।

उसने आख़िर निर्णय किया कि इस कला में निष्णात एक आचार्य से सलाह लूँ और आगे बढ़ूँ। वह आचार्य के घर जाने के लिए निकल पड़ा। जब वह आचार्य के घर पहुँचा तब उसने देखा कि एक युवक बच्चों को सारंगी बजाना सिखा रहा है। वह युवक बीच-बीच में आचार्य को समझा रहा है कि सारंगी पर राग कैसे बजाये जाएँ। उन बच्चों के साथ-साथ आचार्य भी सारंगी बजाना सीख रहे थे। बजाते समय वे ग़लतियाँ भी करते थे तो युवक उन ग़लतियों को सुधारता था।

अब रमानाथ का संदेह दूर हो गया। अब वह समझ गया कि किसी भी कला को सीखने के लिए प्रेम चाहिए और चाहिए लगन। उसे उम्र से कुछ लेना-देना नहीं है। वह अब एक निर्णय पर पहुँचा। उसने सलाह माँगने की कोई ज़रूरत महसूस नहीं की। वह घर लौट गया।

- उमा शर्मा

समाचार झलक

स्नूपी पार्क

कौन है जो स्नूपी का प्रेमी नहीं है, पी नट कॉमिक्स का वह प्यारा पात्र? सभी प्रेमी स्नूपी को पूर्णतया समर्पित एक थीम पार्क की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर सकते हैं। दक्षिण चीन के एक प्रांत गुआंगडांग के एक शहर शुण्डे में उद्घाटन के लिए यह लगभग तैयार है। पाँच लाख पचास हजार वर्ग मीटर में फैले स्नूपी उद्यान और स्नूपी क्रीड़ांगण के निर्माण पर १२.२ मिलियन डॉलर खर्च किया गया है। दावा किया जाता है कि यह विश्व भर में अपने प्रकार का पहला पार्क होगा।

दैत्याकार के अनुकूल

मनीला का एक उपनगर मारिकिना को सामान्य रूप से फिलिपिन की जूते की राजधानी माना जाता है। विश्व भर में जूतों की सबसे लम्बी जोड़ी के निर्माण के लिए गिनिज़ बुक ऑफ रेकॉर्ड में इसकी प्रविष्टि होनेवाली है। कार्डोवन चर्म से निर्मित ये जूते ५.५ मीटर (१७ फुट) ऊँचे और फरवरी २००० में बनी तुर्की जोड़ी से लगभग २ मीटर लंबे हैं।

नृत्य करता यह यंत्र-मानव

यंत्र-मानव-विज्ञान का नवीनतम आविष्कार है असिमो, विश्व का पहला यंत्र मानव जो मनुष्य की तरह चलता और नृत्य करता है। इसका वजन ५२ कि. है और १.२ मीटर ऊँचा है। नाचते समय यंत्र मानव नाचना शुरू करने से पहले तालियों का इंतजार करता है। असिमो का परिचय मलयेशिया के कुआलालामपुर में एक प्रदर्शन में कराया गया।

महाराष्ट्र की एक लोककथा

क़िले की घेराबन्दी

गुफाओं, क़िलों और मंदिरों की भूमि के रूप में विख्यात महाराष्ट्र राज्य पूर्व बम्बई प्रेसिडेंसी के मराठी भाषी क्षेत्रों को मिला कर सन् १९६० में बनाया गया। यह घनी आबादी के राज्यों में से एक है। इसकी जनसंख्या सन् २००१ की जनगणना के अनुसार ९ करोड़ ६७ लाख ५२ हजार २४७ है। इसका क्षेत्रफल ३ लाख ७ हजार ६९० वर्ग किलोमीटर है।

विश्वास किया जाता है कि महाराष्ट्र शब्द महाराठी अथवा संघर्ष शक्ति से लिया गया है। महाराष्ट्र का अर्थ 'विशाल राज्य' भी है। कुछ लोगों का विश्वास है कि महाराष्ट्र शब्द 'महा कन्तारा' अथवा विशाल वन का, जिसका संकेत दण्डकारण्य से है, विकृत रूप है।

महाराष्ट्र राज्य के पश्चिम में अरब सागर, उत्तर-पश्चिम में गुजरात, उत्तर में मध्यप्रदेश, दक्षिणपूर्व में आन्ध्र प्रदेश और दक्षिण में कर्नाटक और गोवा राज्य हैं। यहाँ का नागपुर शहर भारत का लगभग केंद्र स्थान है। मुम्बई अथवा बम्बई राज्य की राजधानी है और मुख्य भाषा मराठी है।

सोमवार सकाल (सबेरे) की धूप चमक रही थी। वह महल के छज्जे पर खड़ी रत्नजटित कंघी से अपने बालों को संवार रही थीं। जैसे ही वह पूर्व दिशा में मुड़ीं कि उनकी दृष्टि अचानक एक क़िले पर पड़ गई। क़िला धूप से नवोत्सर्गित अण्डे के समान बहुत चमक रहा था। इस दृश्य को देखकर वह उत्तेजित हो गईं।

उसने तुरंत अपने एक नौकर को बुलाया और आदेश दिया, "शीघ्र जाओ और मेरे मुलगा (बेटे) को तुरंत यहाँ आने के लिए कहो।

यदि वह भोजन कर रहा है तो हाथ धोये बिना ही उसे यहाँ ले आओ।

वह महिला और कोई नहीं, मराठा शासक शिवा जी की माँ स्वयं जीजाबाई थीं। उसने अभी-अभी प्रतापगढ़ किले के भीतर अपने महल से सिंहगढ़ का मजबूत क़िला देखा था। तब सिंहगढ़ मुगलों के अधीन था। उसने अपने बेटे शिवाजी को बुलाया था जो उस समय रायगढ़ में था।

यह समाचार मिलते ही शिवाजी ने अपनी माँ के आदेश का पालन किया। उसने बक्तरबंद धारण किया और अपनी तलवार, ढाल और बघनखा लेकर काले घोड़े कृष्णा पर सवार हो वह प्रतापगढ़ के लिए चल पड़ा। जल्दी से जल्दी प्रतापगढ़ पहुँचकर उसने माँ को सूचना भेजी।

"आई, आपने इतनी जल्दी मुझे क्यों बुलवाया? आपकी तबीयत बहुत खराब तो नहीं है?" शिवाजी ने पूछा।

जीजाबाई ने प्रत्यक्ष उत्तर नहीं दिया। बल्कि उसने द्युत क्रीड़ा के लिए उसे ललकारा। "यदि मैं जीत जाऊँ तो तुझे एक क़िला देना पड़ेगा, जो मैं चाहूँ।" उसने बताया।

शिवाजी ने पहले चुनौती स्वीकार करने से मना कर दिया। "आई, बेटे के लिए माँ का विरोध करना ठीक नहीं होता, खेल में भी नहीं। कृपया मुझे बाध्य न करें।"

लेकिन जीजाबाई ने एक न सुनी। वह अटल रहीं। अंत में शिवाजी को झुकना पड़ा। जीजाबाई ने माता भवानी का आवाहन किया जो पूरे परिवार की इष्टदेवी थीं।

खेल आरम्भ हुआ और जीजाबाई आसानी से जीत गईं। "माँ, मेरे अधीन का कोई भी क़िला आप ले सकती हैं।" शिवाजी ने हाथ जोड़कर नम्रतापूर्वक कहा।

जीजाबाई ने उन सबको इनकार करते हुए केवल सिंहगढ़ क़िले की माँग की। अब शिवाजी दुविधा में पड़ गये। उसने सिंहगढ़ क़िले की सुदृढ़ सुरक्षा के बारे में सुना था। बहुत लोगों ने कहा था कि क़िला अपराजेय है।

शिवाजी ने माँ का विरोध करते हुए कहा, "सिंहगढ़, उदेभान के अधीन है। और आप जानती हैं कि इस किला पर विजय प्राप्त करना कितना कठिन है। कृपया बदले में मेरा कोई एक

क़िला ले लीजिए।'' किंतु जीजाबाई सिर्फ़ सिंहगढ़ चाहती थीं।

''यदि तुम सिंहगढ़ नहीं दोगे,'' आँखों में धधकती ज्वाला लिए उन्होंने धमकाया, ''मैं अपने शाप से तुम्हारे सारे साम्राज्य को जलाकर भस्म कर दूँगी।''

शिवाजी को अपनी स्वीकृति देनी पड़ी। वे जीजाबाई को अपने साथ रायगढ़ ले गये। वहाँ वे घण्टों तक विचार विमर्श करते रहे कि कौन व्यक्ति सिंहगढ़ को जीतने का दायित्व देने के योग्य होगा। उसने तब अपने पुराने मित्र तानाजी मलुसारे को याद किया। शिवाजी ने महसूस किया कि वही इस कार्य के लिए योग्य व्यक्ति है। उसने उसे तुरंत लिखित संदेश भेजकर तीन दिवस में बारह हजार सिपाहियों के साथ रायगढ़ आने का आदेश दिया।

जब शिवाजी का संदेशवाहक तानाजी के पास पहुँचा तब वे अपने बेटे की शादी की तैयारी कर रहे थे। संदेश पाते ही उन्होंने शादी स्थगित कर दी और गदा तथा हँसिया के साथ बारह हजार आदमियों को लेकर वे रायगढ़ के लिए चल पड़े।

शिवाजी के राज्य में इतनी बड़ी सेना के पहुँचते ही उनके शिविर में हलचल मच गई। जीजाबाई भी कुछ घबरा-सी गईं। रायगढ़ क़िला के प्राचीर से उन्होंने क़िला के निकट आते हुए घुड़सवारों से उड़ती हुई धूल के बादलों को देखा। उन्होंने और नजदीक से देखकर शिवाजी से

क़िले और गुफाएँ

Daulatabad Fort

महाराष्ट्र की सुंदरता इसके क़िले और गुफाओं से परिलक्षित होती है। इसे ठीक ही दग्धअंचदेश यानी शिलाओं का देश कहा जाता है। राज्य के ३५० से भी कुछ अधिक क़िले शताब्दियों तक बर्षा और धूप झेलते रहे। क़िले पहाड़ियों पर अथवा समुद्र तट पर बने हुए हैं। उनमें से अधिकांश महान मराठा योद्धा छत्रपति शिवाजी से संबंधित हैं। ये क़िले सामान्य तौर से किलेबंद नगर थे। रायगढ़, राजगढ़, सिंधुदुर्ग, प्रतापगढ़, दौलताबाद तथा टोरना राज्य के क़िले प्रसिद्ध माने जाते हैं।

जटिल उत्कीर्णन एवं चित्रण से भरपूर अजन्ता एवं एलोरा की गुफाएँ बौद्ध परम्परा एवं संस्कृति को दर्शाते हैं। ये गुफा-तीर्थ-स्थल बुद्ध की कथा को चित्रित करते हैं। विश्वास किया जाता है कि ये गुफाएँ २०० बी.सी. में बनाई गई थीं और सन् ६५० में परित्यक्त कर दी गई थीं। ये गुफाएँ बौद्ध भिक्षुओं के लिए एकान्त आवास स्थल थीं।
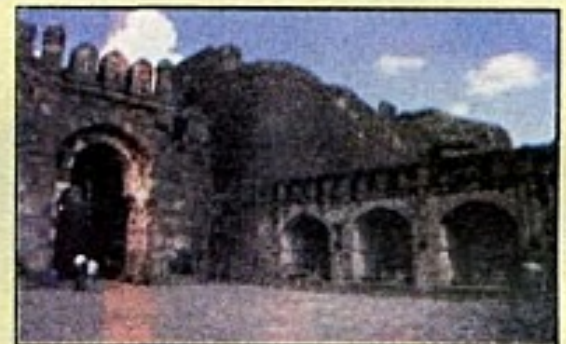
कहा, ''क्या ये मुगल सिपाही हो सकते हैं? क्या हम पर आक्रमण किया जा रहा है?''

परंतु शिवाजी ने केवल त्योरी चढ़ाकर कहा, ''हमें ऐसी कोई खबर नहीं है माँ ! मेरे गुप्तचर गलत नहीं हो सकते।'' जब सिपाही और निकट आये, शिवाजी ने ध्वज से पहचान लिया कि अवश्य यह पुराने मित्र तानाजी की सेना होगी !

शिवाजी ने उसका स्वागत किया। लेकिन सूबेदार (नायक) ने पुरानी मैत्री की स्वतंत्रता का लाभ लेते हुए शिवाजी को डाँटा, ''लेकिन तुम्हें मेरे बेटे के विवाहोत्सव के बीच में मुझे बुलाने की क्या जरूरत पड़ गई?''

''तानाजी, आप मुझे क्षमा करें। मेरी माँ ने ही आपको यहाँ तुरंत आने के लिए कहा है,'' शिवाजी ने समझाया। जीजाबाई ने उठकर तानाजी की उपस्थिति के लिए भवानी माँ को धन्यवाद दिया। तब उन्होंने 'अला बले' किया यानी तानाजी के सिर के चारों ओर दीपक घुमाया और अपनी कनपटी पर अपनी उंगली चटकाई ताके भवानी माँ उसकी रक्षा करें।

तानाजी बड़े प्रभावित हुए। उसने तुरंत अपनी पगड़ी उतार कर जीजाबाई के कदमों पर रख दिया और उनकी इच्छा पूरी करने की प्रतिज्ञा की। जीजाबाई ने सिंहगढ़ की माँग करते हुए कहा, ''यदि तुम मेरे लिए यह कर दो तब मैं तुम्हें शिवाजी का 'धकटा भाऊ' (छोटा भाई) और अपना 'मुलगा' (बेटा) समझूँगी।''

तानाजी प्रसन्नतापूर्वक सहमत हो गये। इसकी खुशी में, जीजाबाई ने तानाजी एवं उसके सैनिकों के सम्मान में एक भोज का आयोजन किया। उन्होंने वस्त्र और शस्त्र का वितरण किया।

शीघ्र ही सैनिक अपने निर्दिष्ट कार्य पर चल पड़े। कुछ दूर यात्रा करने के बाद वे आनन्दी बाड़ी नामक स्थान पर पहुँचे। वहाँ तानाजी ने एक ग्रामीण मुखिया का वेश बनाया और जंगल से होकर जाने लगे। अंत में वे शत्रु की सीमा चौकी पर पहुँचे। जैसा कि उन्होंने सोचा ही था, सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया। तानाजी ने उन्हें बताया, ''मैं सखारा का पाटिल हूँ। जब मैं जंगल से गुजर रहा था तब एक बाघ ने मुझ पर आक्रमण कर दिया। मैं उससे बचने के लिए भाग आया और अब शरण लेने यहाँ आया हूँ।''

सिपाहियों ने उनकी बात का विश्वास कर

तानाजी ने शिवाजी के एक घोड़े को उसकी कमर में एक रस्सी बाँधकर और क़िले की चोटी की ओर उसका मुख करके छोड़ दिया। "तुम्हें वहाँ ऊपर जाना है और हमारे लिए उस शिखर पर पहुँचना है।" उसे प्यार से पर दृढ़तापूर्वक समझाया।

घोड़ा प्रशिक्षित और कुशाग्र बुद्धि का था। वह हिनहिनाया मानों वह आज्ञा पालन के लिए तैयार था। तानाजी ने जैसे ही उसे पीछे से धकेल कर आगे बढ़ने का संकेत दिया, वह पहाड़ी की चोटी पर दौड़कर चढ़ गया और जमीन से टिकाकर अपना पाँव जमा दिया।

तब तानाजी तथा उसके २५ सैनिक घोड़े में

लिया। तानाजी ने शीघ्र ही पान, सुपारी और अफीम की भेंट देकर उनका विश्वास जीत लिया। उन्होंने आभूषण के उपहार भी दिये और बड़ी चतुराई से उनसे दोस्ती बढ़ा ली। कुछ दिनों में ये अपने हाथों से उन्हें खाना खिलाने लगे। जब उन्होंने देखा कि अब समय अनुकूल है तब उन्होंने उनमें से कुछ विश्वास पात्रों को अपना वास्तविक परिचय दिया। अब सैनिक सूचना देने को तैयार थे। तानाजी को मालूम हो गया कि चोटी पर जाने के लिए किस तरफ का मार्ग आसान होगा। उन सब ने उदेभान तथा उसके लेफ्टिनेंट सिदी हिलाल के बारे में सब कुछ बता दिया।

उसी रात्रा (रात) तानाजी और उसके सिपाही किले के कल्याण गेट पर पहुँचे। वहाँ

बंधी रस्सी के सहारे ऊपर चढ़ गये। वे अपने मुँह से पकड़कर अपनी तलवारें ले गये क्योंकि वे अपने हाथ-पाँव के बल से चढ़ाई चढ़ रहे थे। वे छिपकर किले में घुस गये और पहरेदारों पर आक्रमण कर दिया। तब वे रेंगकर दूसरे गेट पर पहुँचे और वहाँ के पहरेदारों को मारकर आगे बढ़े।

एक पहरेदार भागने में सफल हो गया जिसने उदे भान को आक्रमण की सूचना दे दी। उदे भान ने किले की रक्षा के लिए पहले अपने लेफ्टिनेंट को भेजा। लेकिन जब वह असफल हो गया तो उसने अपने बेटों को भेजा। बेटों के मारे जाने पर वह स्वयं युद्ध के लिए आया। उसने देखा कि शत्रु की सेना बहुत छोटी है। उसकी बड़ी सेना अपने नेता को सामने देखकर दुगुने उत्साह से तानाजी पर टूट पड़ी। उदेभान के

कला एवं संस्कृति

राज्य में अजन्ता की गुफाओं की भित्ति चित्रकला से लेकर वर्ली लोक चित्रकला तक कला और हस्तकला की एक दीर्घ और विविध परम्परा है।

महाराष्ट्र में वस्त्रोद्योग का एक सुदृढ़ इतिहास है और यहाँ के विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार की साड़ियाँ तैयार की जाती हैं। इनमें मुख्य हैं - औरंगाबाद की मश्रु और हिम्रु साड़ियाँ, पैथानी साड़ियाँ तथा शोलापुर की नारायणपेट साड़ियाँ।

राज्य के अन्य लोकप्रिय दस्तकारी उद्योग हैं - बिद्री के बरतन, प्रलाक्षा के बरतन तथा विश्व प्रसिद्ध कोल्हापुरी चप्पल।

हाथों तानाजी युद्ध में खेत आ गये। लेकिन तानाजी के सैनिकों ने शीघ्र ही उदेभान को मारकर अपने नेता की मृत्यु का बदला चुका लिया।

तानाजी की शेष सेना तब तक पहुँच चुकी थी। उदेभान की सेना के पाँव उखड़ गये। सिंहगढ़ जीत लिया गया। किले पर शिवाजी का ध्वज फहराने लगा और पाँच तोपों की सलामी दी गई।

यह खबर सुनकर शिवाजी के आनन्द की सीमा न रही। उनका माँ को दिया हुआ बचन पूरा हुआ। तानाजी में उनका विश्वास प्रमाणित हो गया। शिवाजी शीघ्र ही सिंहगढ़ पहुँचे और खड़ी ढाल के मार्ग से होकर किले में गये।

इन्होंने कल्याण गेट से महल में प्रवेश किया और अपने बहादुर साथी तानाजी के शव तक घोड़े को दौड़ाकर ले गये। जब तानाजी के शव को देखने के लिए शिवाजी रुके, तब सिपाहियों ने उन्हें सिंहगढ़ पर विजय के लिए बधाई दी। लेकिन शिवाजी ने उन्हें दुख भरी आवाज में यह कहकर चुप कर दिया, 'गढ़ अला पन सिंह गेला' अथवा गढ़ तो हमें मिला परंतु हमने सिंह को खो दिया।

तृप्ति

दुपहर के समय नदी के किनारे एक पेड़ के तले बैठकर स्वामीजी ध्यान में मग्न थे। उस समय एक ग़रीब जवान वहाँ आया। वह चिंताग्रस्त लग रहा था।

युवक ने सोचा कि स्वामीजी के ध्यान में भंग डालना उचित नहीं है, इसलिए घुटने टेककर उनके सामने थोड़ी देर तक बैठा रहा। जब उसने देखा कि स्वामीजी आँखें खोलकर देखने का नाम ही नहीं ले रहे हैं तो उसने धीमे स्वर में पुकारा, ''स्वामीजी''।

स्वामी ने आँखें खोलीं और युवक को ध्यानपूर्वक देखते हुए कहा, ''कहो पुत्र, तुम्हारी चिंता का क्या कारण है?''

''स्वामीजी, मेरा नाम धनदास है। पर मेरे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है। दिन भर मुट्ठी भर अन्न के लिए घूमना पड़ता है। मेरे पास बहुत धन क्यों नहीं है? मुझे तो लगता है कि इस ग़रीबी से मौत कहीं अच्छी है।'' युवक ने निराशा-भरे स्वर में कहा।

''धनदास तुम्हारा नाम है और यह नाम अच्छा है। मैं तुम्हारी समस्या को सुलझाऊँगा। यहाँ नहीं, कहीं और। मेरे साथ चले चलो,'' स्वामीजी ने कहा। फिर आगे स्वामीजी और पीछे-पीछे धनदास चलते जाने लगे।

थोड़ी देर बाद दोनों एक बड़े भवन के पास पहुँचे। वहाँ विवाह भोज संपन्न हो रहा था। उस भवन का मालिक बड़ा ही धनवान था। स्वामीजी को देखते ही नमस्कार करते हुए उन्हें भवन के अंदर ले गया। धनदास भी उनके पीछे-पीछे गया।

''स्वामीजी, मैं आपका सेवक हूँ। आप जो भी माँगेंगे, वह क्षण भर में प्रस्तुत करूँगा।'' धनिक ने विनयपूर्वक कहा।

''ठीक है। तुम अपना काम करो। मुझे जो

- गोपीनाथ -

चाहिए, वह नौकरों से मँगवा लूँगा।'' स्वामीजी ने कहा।

धनदास को लेकर स्वामीजी रसोई-घर में गये। वहाँ बड़े-बड़े बरतनों में भोजन-पदार्थ भरे पड़े थे। तरह-तरह के पकवान बरतनों में खचाखच भरे हुए थे।

धनदास ने एक बड़ी थाली ली, उसमें पकवान भर लिये, और जल्दी-जल्दी खाने लगा। पंद्रह मिनटों तक लगातार खा चुकने के बाद उसका पेट भर गया। उससे और खाया नहीं गया।

स्वामीजी ने उसे प्रोत्साहन देते हुए कहा, ''रुक क्यों गये? खाओ, खूब खाओ।''

''मुझसे और खाया नहीं जाता स्वामीजी। जो खाया, वही बहुत है,'' धनदास ने हाँफते हुए कहा।

''ऐसा क्यों कह रहे हो? यहाँ पकवानों का ढेर है। बार-बार खाने को ये थोड़े ही मिलेंगे। इससे बढ़कर तुम्हें और चाहिए भी क्या? खाओ, खाते जाओ,'' स्वामीजी ने कहा।

''माफ़ कीजिए स्वामीजी, बहुत दिनों तक खाया जा सकनेवाला खाना एक ही बार कैसे खा सकता हूँ? कैसे यह संभव होगा? जिस दिन जो खाना है, उसे उस दिन थोड़ा-थोड़ा करके ही खा सकते हैं।'' धनदास ने कहा।

''तुमने ठीक ही कहा। पर धन के विषय में भी तुम ऐसा क्यों नहीं सोचते हो? वह धन का दास होना कहलाया जायेगा, पर वह धन का यजमान होना नहीं कहलाया जायेगा। अपने से जितना हो सकता है, मेहनत करके थोड़ा-थोड़ा कमाना पर्याप्त नहीं है? मनुष्य में अत्याशा होनी नहीं चाहिए। आशा की पूर्ति न होने पर वह अशांति का शिकार हो जाता है। उसकी नींद उड़ जाती है। जीवन दूभर लगने लगता है। जिस जीवन में शांति नहीं होती, वह जीवन जीने लायक़ नहीं है। मनुष्य को मुख्यतया चाहिए, तृप्ति।'' स्वामीजी ने उसे समझाया।

''स्वामीजी, मेरी समस्या का परिष्कार-मार्ग मिल गया।'' कहते हुए धनदास ने झुककर स्वामीजी के पैरों को प्रणाम किया और वहाँ से उत्साहपूरित हो चलता बना।

अपने भारत को जानो

१. आजादी से पहले ब्रिटिश भारत की ग्रीष्म राजधानी कहाँ थी?

A - श्रीनगर B - शिमला

C - देहरादून D - डलहौजी

२. निम्नलिखित नदियों में से एक की सहायक नदियाँ थीं - सलेरी, प्राणहिता और इन्द्रावती

A - कृष्णा B - गोदावरी

C - कावेरी D - साबरमती

३. इस चित्र के विषय में बेमेल क्या है?

४. क्या इस सेतु को पहचान सकते हो? यह कहाँ और किस नदी पर स्थित है?

५. पंजाब और हरयाणा की राजधानी एक ही है। चंडीगढ़ से पहले पंजाब की राजधानी कहाँ थी?

A - जलन्धर B - लुधियाना

C - अमृतसर D - शिमला

६. यदि बंगलोर भारत का सिलिकॉन घाटी है, तो भारत का इस्पात नगर कौनसा है?

A - सालेम B - राउरकेला

C - जमशेदपुर D - भिलाई

अप्रैल प्रश्नोत्तरी के उत्तर

१. डॉ. होमी भाभा

२. १९६४ देविका रानी रोरिक

३. डॉ. एस.ज़ेड. क़ासिम

४. वह २१ नेत्रहीन पर्वतारोहियों का पहला दल था, जिसे हिमालयन इंस्टिट्यूट ऑफ माउंटेनियरिंग में प्रशिक्षण दिया गया था।

५. यासिम मर्चेण्ट

६. डॉ. सलीम अली, रोमुलस विट्टाकर

७. १ अप्रैल १९५७

८. तेनजिंग नॉरगे और सर एडमंड हिलैरी

९. परमवीर चक्र

१०. विजय अमृत राज
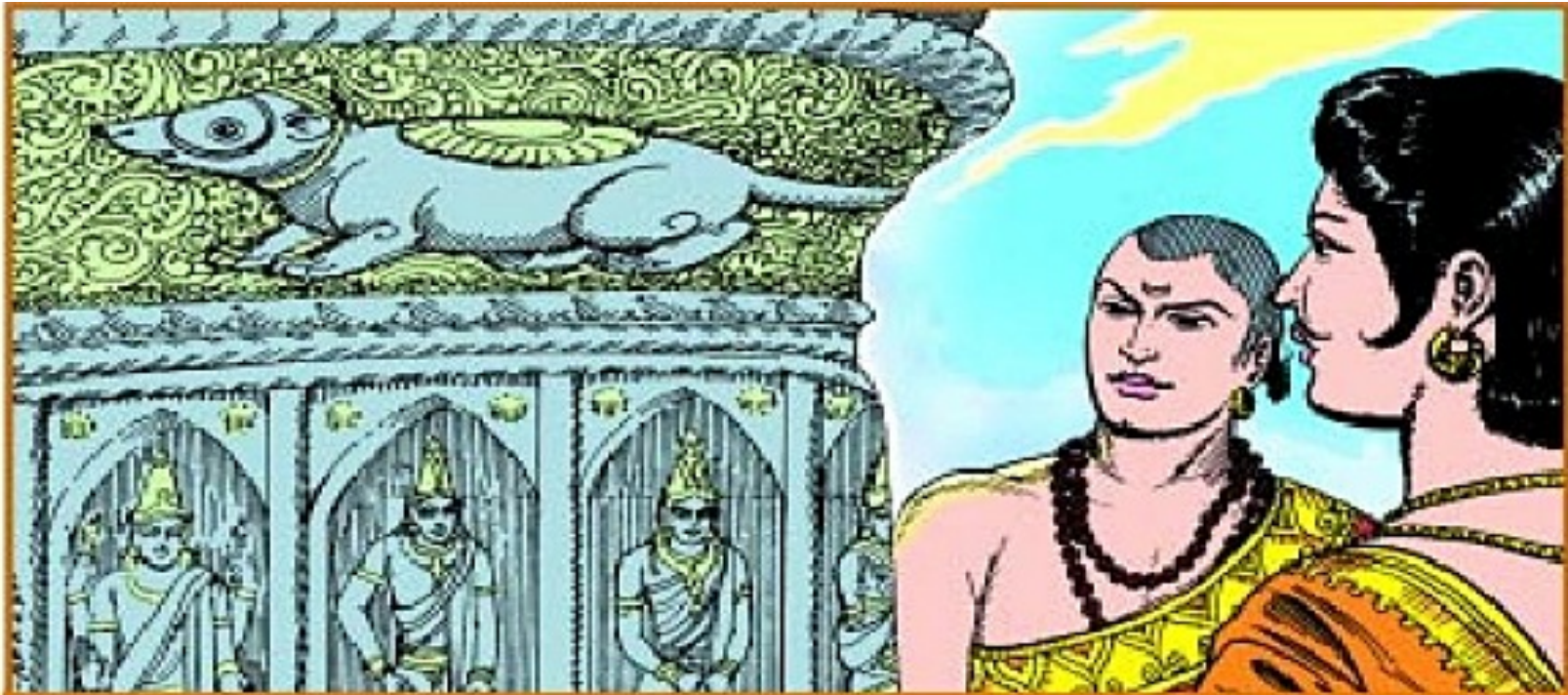
विघ्नेश्वर

विघ्नेश्वर की प्रतिमा के भीतर की देव-मूर्तियों के संगीत पर तन्मय हो अगस्त्य महर्षि ने कहा, ''बातापि गणपति ! आपने अपनी अद्‌भुत प्रतिमा को स्वयं गढ़ लिया है। ऐसी अपूर्व मूर्ति को गढ़ना किस के लिए संभव है?''

इस पर प्रतिमा के भीतर से विघ्नेश्वर के ये शब्द सुनाई दिये, ''अगस्त्य महर्षि, यह प्रतिमा मैंने अपने लिए नहीं गढ़ी है। तुम्हारी संतुष्टि के लिए, तुम्हारी कामना की पूर्ति के लिए गढ़ी है। इसलिए यह विशाल मूर्ति थोड़े समय के बाद अदृश्य हो जाएगी। द्वापर युग में जब युधिष्ठिर अश्वमेध याग करेंगे, उस बक़्त इसी स्थान पर एक और विशाल प्रतिमा प्रतिष्ठित की जाएगी।''

यों धौम्य अर्जुन को सुनाकर बोले, ''हे अर्जुन, उसी महान प्रतिमा को हम देख रहे हैं !''

अर्जुन ने उस विशाल प्रतिमा की कई बार परिक्रमा की, तब भक्ति एवं श्रद्धा के साथ उस प्रतिमा को परखकर देखा। वह बिग्रह स्वयं विघ्नेश्वर ही थे। विघ्नेश्वर के साथ त्रिमूर्ति, जगदम्बा, लक्ष्मी, पार्वती, सरस्वती, नव ग्रह, इत्यादि अनेक देव-प्रतिमाएँ मनोहर मूर्तियों के रूप में गढ़ी गई थीं। विघ्नेश्वर के दो चरणों के बीच विघ्न बंदी बनाया गया था। मूषिक राजा की पूँछ मूर्ति के चारों तरफ लपेटी गई थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उस अपूर्व प्रतिमा का अबलोकन करने के लिए सहस्र नेत्र भी पर्याप्त नहीं हो सकते। दिल भर कर उस प्रतिमा को देखने के बाद अर्जुन धौम्य से बोले, ''आचार्यजी, इस अद्‌भुत प्रतिमा के चारों तरफ़ व्याप्त बातापि नगर एक जमाने में उच्च दशा में
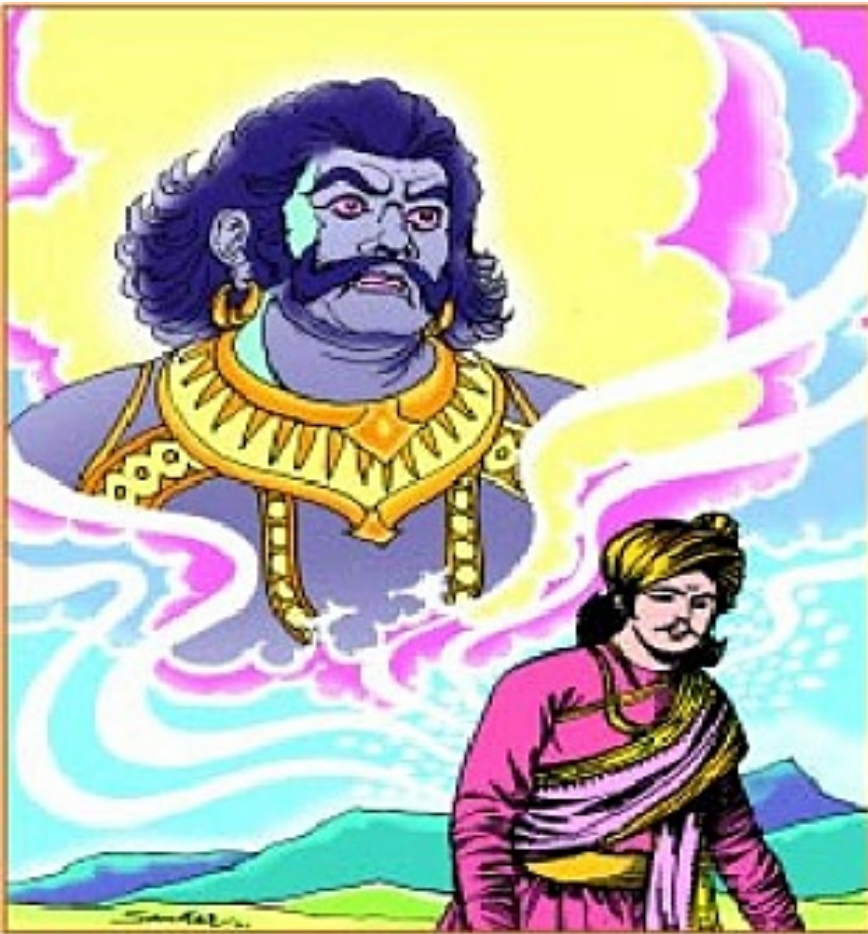
था, आज इस नगर की यह हालत क्यों है? मेरे मन में बातापि नगर का बृत्तांत सुनने की बड़ी जिज्ञासा पैदा हो रही है। कृपया उसकी गाथा सुनाइये।'' धौम्य आगे की कहानी सुनाने लगे : अगस्त्य महर्षि ने अपनी पत्नी लोपामुद्रा के आदेशानुसार सारा धन बहाँ के लोगों में बाँट दिया। इसके बाद उन्हें समझाया कि वे लोग शासन की जिम्मेदारियों और नागरिक कर्तव्यों का अच्छी तरह से पालन करते हुए सुखमय जीवन बितायें। तब वे खाली हाथ लोपामुद्रा के साथ अपने आश्रम में चले गये।

विघ्नेश्वर की प्रतिमा को ही प्रजातंत्र का मुकुट मानकर उसकी आराधना करते हुए बातापि नगर की प्रजा चिर काल तक सुखमय जीवन बिताती रही। कई पीढ़ियाँ गुजर गईं, फिर भी बातापि नगर एक आदर्श प्रजातंत्र राज्य के रूप में सर्वत्र लोकप्रिय बना रहा। अगस्त्य के डर से भागकर इल्वल विन्ध्याचल के जंगलों में छिप गया और वह अज्ञात जीवन बिताने लगा।

०उसने थोड़े दिन बाद सुना कि बातापि नगर सब प्रकार से उन्नत दशा में है और अगस्त्य महर्षि उस वक्त उस नगर में निवास नहीं कर रहे हैं; तब साम, दाम, भेद व दण्डोपायों के द्वारा अपनी इच्छा की पूर्ति के ख्याल से जनता की सेवा को अपने जीवन का आदर्श बताते हुए इल्वल छद्मवेष में बातापि नगर की जनता के बीच पहुँचा। उस समय नगर की हालत उसके अनुकूल थी।

धीरे-धीरे समय के प्रभाव से अगस्त्य महर्षि की गैरहाजिरी में बातापि नगर की जनता में स्वार्थ बढ़ता गया। अमीरी-गरीबी फिर पनपने लगी। जनता के बीच भेदभाव और मन-मुटाव सर उठाने लगे। होशियार लोग भोले लोगों को धोखा-दगा देने लगे।

नगर की ऐसी पतनावस्था में इल्वल जनता के एक नेता के रूप में सामने आया। उसने अपने जादू-तंत्रों और मायावी प्रभावों के जरिये एक महा पुरुष के रूप में जनता को अपनी ओर आकृष्ट किया। जनता उस पर बिश्वास करने लगी।

इल्वल ने यह बात समझ ली कि बातापि नगर के बीच स्थापित विघ्नेश्वर की प्रतिमा के प्रति जनता के मन में जब तक श्रद्धा और भक्ति बनी रहेगी, तब तक बहाँ की जनता अगस्त्य और अगस्त्य के द्वारा प्रचारित नैतिक सूत्रों को भूल

नहीं पायेगी। इसलिए उसने जनता के मन में तंत्र-विद्याओं, दुराचारों और मद्यपान के प्रति अभिरुचि पैदा कर दी। अगस्त्य ने प्रजातंत्र के नैतिक सूत्रों के जो शिलालेख यत्र-तत्र पहले गड़वाये थे, उन्हें इल्वल ने निकलवा दिया और उनकी जगह अपने सिद्धांतों के नये सूत्रों का प्रचार किया। एक दूसरे को लूटने में जो ख़ुशी होती है, उसका नशा लोगों में फैला दिया। साथ ही इन सिद्धांतों का भी प्रचार किया कि आँख-नाक बंद किये बैठे रहना मानव का लक्षण नहीं है, नये-नये सुखों की खोज करने के लिए उन्हें जीना जरूरी है। इस बीच प्रच्छ न्न बेष धारण कर बहुत से राक्षस इल्वल की मदद के लिए आ पहुँचे।

जनता के सेवक के रूप में प्रवेश करके, जनता के नेता बनकर धीरे-धीरे इल्वल महा नेता कहलाने लगा। जनता जब पूर्ण रूप से उसके अधिकार में आ गई, तब वह एक नियंता बनकर जनता को कुचलने लगा। सारे देश में हलचल मच गई और बहुत से लोग नगर छोड़कर चले गये।

इल्वल ने नगर के बीच स्थित विघ्नेश्वर की प्रतिमा को नष्ट करने की सब तरह से कोशिश की। उसने चारों तरफ़ तोपों को लगाकर उसका निशाना बनाया। मूर्ति के नीचे विस्फोटक पदार्थ रखवाये। अब सिर्फ़ उसमें आग लगाने की देरी थी। ऐसी हालत में एक अनोखी घटना हुई। बिना आग लगाये ही बारूद में अचानक विस्फोट हुआ। तोप अपने आप पीछे की ओर मुड़कर आग के गोलों की वर्षा करने लगे। उसमें बहुत सारे दुष्ट लोग मारे गये। अनेक लोग विकलांग बने, उनमें इल्वल भी एक था। इल्वल एक पैर और एक हाथ खो बैठा। खून से लथपथ हो जमीन पर लोटनेवाले इल्वल को मूर्ति के भीतर से ये शब्द सुनाई पड़े, ''अरे इल्वल, अंग विकलता और बुढ़ापे से सड़ते हुए तुम चिरकाल तक जीओ। यही तुम्हारे लिए सही सजा है।'' यों विघ्नेश्वर ने उसे शाप दिया।
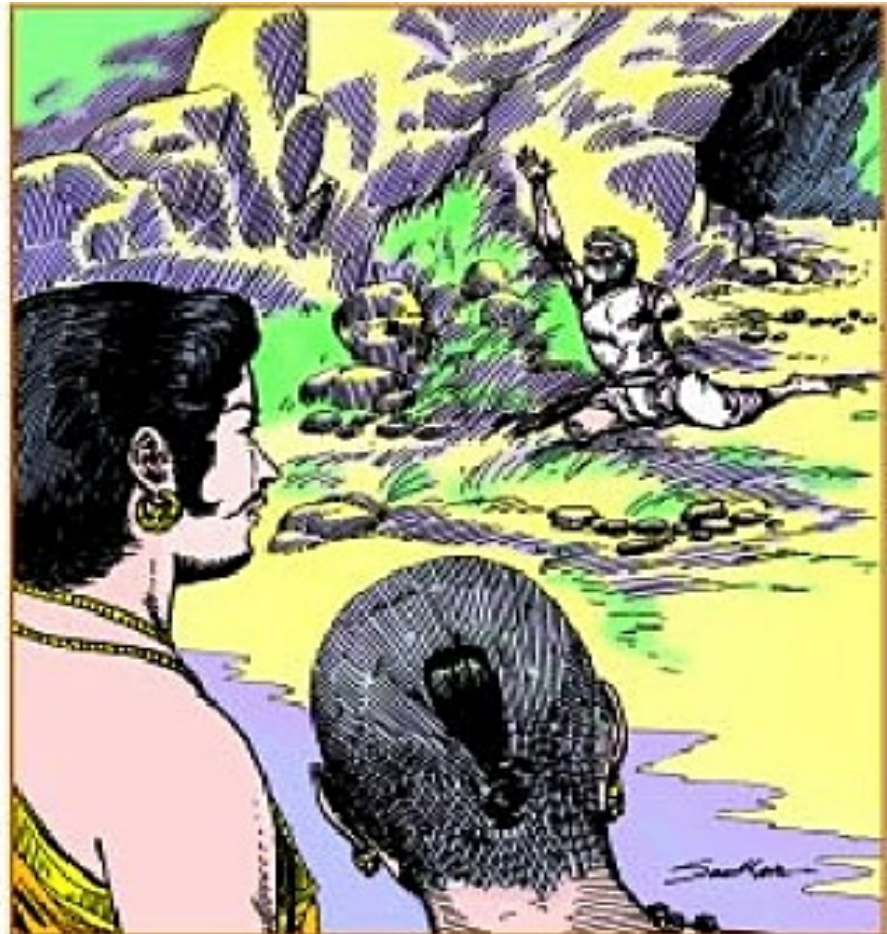
''वातापि नगर अपने पूर्व वैभव को खोकर उजड़ गया है, अब इसमें नाम के वास्ते थोड़े से लोग बसते हैं।'' धौम्य ने अपनी बातें समाप्त कीं।

अर्जुन ने पीछे मुड़कर देखा और अवाक् रह गये। उन्हें विघ्नेश्वर की प्रतिमा दिखाई नहीं दी। अर्जुन को विस्मित देख धौम्य बोले, ''अर्जुन, अचरज में न आओ। तुमने इसके पूर्व ही सुना है कि विघ्नेश्वर की यह अद्भुत प्रतिमा अदृश्य
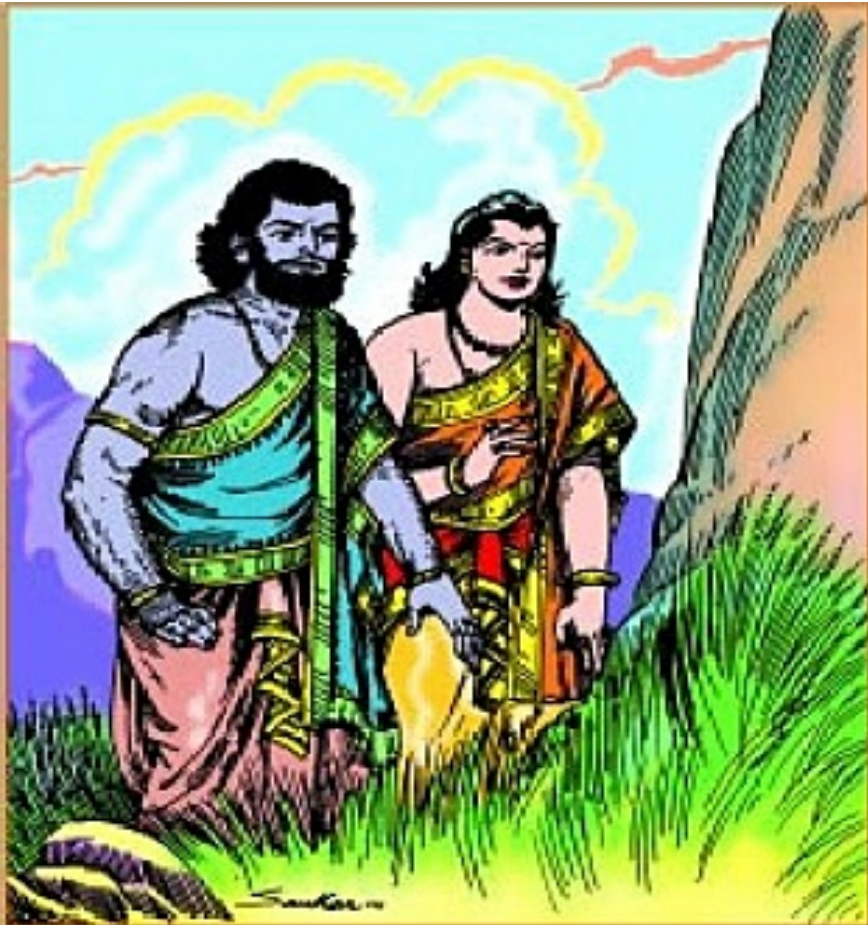
हो जाएगी।'' धौम्य यों सुना ही रहे थे कि एक बृद्ध समीप की कंटीली झाड़ियों से विकृत रूप में एक लूले हाथ और एक लंगड़े पैर के साथ अपने शरीर को घसीटता आया, जोर से चीखते हुए मूर्ति की ओर बढ़ा और हाथ जोड़कर छटपटाते हुए दम तोड़ बैठा। उस दृश्य को देख अर्जुन ने पूछा, ''गुरुदेव, यही है न इल्वल?''

''हाँ, दुष्टों का अंत हमेशा इसी तरह होता है।'' धौम्य ने जवाब दिया।

इसके बाद दूतों के द्वारा अर्जुन ने युधिष्ठिर के पास संदेशा भेजा कि वे तुरंत वातापि नगर चले आयें। हस्तिनापुर से युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेव के साथ वातापि नगर पहुँचे।

उस दिन रात को युधिष्ठिर उस स्थान पर बैठकर, जहाँ से विघ्नेश्वर की मूर्ति अंतर्धान हो गई थी, विघ्नेश्वर का ध्यान करने लगे, ''मेरे छोटे भाई ने आपकी महान प्रतिमा के दर्शन किये हैं। भगवन, क्या मुझे यह अवसर प्रदान नहीं करेंगे? आपकी महान प्रतिमा को कौन गढ़ेगा? यथाशीघ्र आपकी प्रतिमा को स्थापित करने का अवसर मुझे प्रदान कीजिए।''

उस वक़्त युधिष्ठिर के कानों में ये शब्द गूँजने लगे, ''युधिष्ठिर, देव शिल्पी विश्वकर्म और दानव शिल्पी मय आकर प्रतिमा गढ़ेंगे। मूर्ति की प्रतिष्ठा के बाद यज्ञ का अश्व निकलेगा। आपका अश्वमेध याग निर्विघ्न पूरा होगा। आप वातापि नगर का पुनरुद्धार कीजिए। आपकी संतति के चंद्रवंशी लोग चिरकाल तक इस नगर पर शासन करेंगे।''

युधिष्ठिर ने आँखें खोलकर देखा, सामने विघ्नेश्वर की भारी मूर्ति द्युतिमान होकर दिखाई दी, पर तुरंत अंतर्धान हो गई।

दूसरे ही दिन एक गोरे और एक काले व्यक्ति समीप की झाड़ियों में स्थित भारी शिलाओं का परिशीलन करते दिखाई दिये। युधिष्ठिर ने समझ लिया कि वे दोनों कौन हैं और उन्हें प्रणाम करके उनका आदर किया।

उन शिलाओं को उखाड़ने के लिए जब खुदाई शुरू की गई, तब वहाँ पर बहुत बड़ा खजाना हाथ लगा। इल्वल ने वह सारा सोना छिपा रखा था। उस जगह को छोड़ न पाने की हालत में वह सड़-सड़ कर वहीं पर मर गया था। युधिष्ठिर ने उस धन का उपयोग वातापि नगर के विकास में लगा दिया।

दो महान शिल्पियों के द्वारा विघ्नेश्वर की

मूर्ति तथा मंदिर उस स्थान पर अवतरित हुए, जहाँ पर बिघ्नेश्वर की मूर्ति अदृश्य हो गई थी। साथ ही मण्डप भी तैयार किया गया। वहाँ पर विश्वकर्म और मय की शिल्प शैलियों के अद्‌भुत मिश्रण द्वारा एक महान एवं नवीन शिल्प-संप्रदाय का शुभारंभ हुआ। भरत वंश के द्वारा स्थापित यह शिल्प भारतीय शिल्प के रूप में विख्यात हुआ। शिल्प की समाप्ति के बाद दोनों शिल्पी अदृश्य हो गये।

मंदिर में युधिष्ठिर के द्वारा बिघ्नेश्वर की प्रतिमा की स्थापना होते ही यज्ञ का घोड़ा चल पड़ा। अर्जुन और भीम सेना को लेकर उसके पीछे चल पड़े। युधिष्ठिर अगस्त्य के द्वारा चलाये गये प्रजातंत्र शासन को वातापि नगर में स्थापित कर नकुल और सहदेव के साथ हस्तिनापुर लौट गये।

थोड़े समय तक प्रजातंत्र के पर्यायवाची के रूप में वह प्रदेश अगस्त्य राज्य तथा वह नगर अगत्स्य नगर नाम से पुकारे गये। मगर कालांतर में वातापि नगर नाम से ही वह स्थिर हो गया।

अर्जुन दिग्विजय करके घोड़े के साथ हस्तिनापुर लौट आये। अश्वमेध याग संपन्न हुआ। युधिष्ठिर ने यज्ञ के अंशों को विशेष रूप से विश्वकर्म तथा मय को समर्पित किया। शिल्पियों और शिल्प का भी इस प्रकार आदर दिया।

युधिष्ठिर के बाद परीक्षित तथा परीक्षित के बाद जनमेजय ने राज्य किया। जनमेजय की संतान ने वातापि नगर पर शासन किया।

वातापि नगर पर शासन करनेवाले चंद्रवंशी राजाओं में शत्रुंजय बड़ा ही राज्याकांक्षी था। उसने वातापि नगर को राजधानी बनाकर वातापि साम्राज्य की स्थापना की। सेना का विस्तार करने के लिए उसने जनता पर कर बढ़ाये। इस

तरह वह निरंकुश शासन करने के कारण जनता के असंतोष का कारण बना। ऐसा लगा कि इल्वल शत्रुंजय के रूप में पैदा हो गया है। मतलब, उसी के जैसे जनता पर अत्याचार करने लगा।

शत्रुंजय के पुत्रों में अंतिम पुत्र चलुक वर्मा उत्तम स्वभाव का था। अगस्त्य के प्रजातंत्र शासन संबंधी सूत्रों को वह मानता था। विघ्नेश्वर की आराधना करते हुए विद्याओं तथा कलाअ ों के प्रति वह बड़ी अभिरुचि रखता था। जनता का आदर उसने इस तरह प्राप्त किया कि जनता सोचने लगी कि अगस्त्य का अंश इस राजा के अंदर मौजूद है।

शत्रुंजय ने साम्राज्य का विस्तार करने के लिए अपने पुत्रों को प्रेरित किया। पर चलुक ने अपने पिता को समझाया, ''जनता को सतानेवाले साम्राज्य का विस्तार कसाई वृत्ति के बराबर है।'' यों कहकर उसने अपने भाइयों के साथ मिलकर दूसरे राज्यों पर आक्रमण करने के लिए जाने से इनकार कर दिया।

इस पर शत्रुंजय नाराज़ होकर बोला, ''तुम मेरे वंश में इस तरह पैदा हो गये हो, जैसे सिंह के पेट में चूहे ने जन्म लिया हो। तुम्हें उचित दण्ड मिलना चाहिए।'' यों कहकर उसने एक चुहिया को मँगवाया, उसका नाम चुलुका रखा और उसके साथ चलुक वर्मा की शादी घोषित कर दी।

चुलुका का वास्तविक नाम कल्याण किंकिणी था। वह एक अप्सरा थी। पर इ ंद्र के शाप से वह एक चुहिया के रूप में धरती पर गिर पड़ी थी।

शत्रुंजय ने इस ख़्याल से उस विवाह के लिए राजा तथा प्रजा को निमंत्रित किया कि विवाह वेदी के पीढ़ों पर राजकुमार के साथ चुहिया को देख लोग परिहास करेंगे; तब चलुकवमा र्लज्जा के मारे अपना सिर झुका लेगा। पर चलुक वर्मा मंदहास करते हुए बोला, ''विघ्नेश्वर एक चुहिया को एक महाराजा की वधू बना सकते हैं तो वे उस चुहिया को एक सुंदर युवती के रूप में भी बदल सकते हैं। पर इस बात पर शायद आप सब विश्वास न करें, मगर मैं पूर्ण रूप से विश्वास करता हूँ।''

राजा की कृपा

कनकगिरि के शासक कमलाकर बड़े ही कलाप्रिय शासक थे। उनके आस्थान में हर दिन संगीत सभाएँ होती थीं, पंडित-गोष्ठियाँ होती थीं। वे कभी-कभी बहुरूपिये के वेष में राजधानी के पास के जंगल में जाया करते थे। प्रकृति सौंदर्य का आनंद लूटते थे और पक्षियों की मधुर चहचहाहट सुनते हुए खो जाते थे।

जंगल की पगडंडी से थोड़ी दूर एक छोटा-सा घर था। राजा जब कभी भी उस तरफ़ जाते थे, उस घर से तले बैंगन की तरकारी की सुगंध आती थी। वहाँ जाकर खाने की उनकी तीव्र इच्छा होती थी, पर वे अपने को काबू में रखते थे और राजधानी लौट आते थे।

यद्यपि राजा कमलाकर अपने भवन में स्वादिष्ट खाना खाते थे, जो भी खाना चाहें, उन्हें मिल जाता था, पर ऐसी अद्‌भुत सुगंध उन्होंने कभी नहीं मिली। वह हमेशा सोचते थे, जो भी हो, एक ही बार सही, उस घर में खाना है।

एक दिन दुपहर को बहुरूपिया बनकर वहाँ गये और दरवाज़ा खटखटाया। तुरंत अधेड़ उम्र की एक सुहागिन ने दरवाज़ा खोला। उसने पूछा, ''आप कौन हैं?''

राजा ने बिना सकपकाये कहा, ''परदेशी हूँ। भूखा हूँ। खाने को कुछ मिलेगा?''

''अभी-अभी हम खा चुके। पर कोई बात नहीं। भूखे हैं, खिलाना तो पड़ेगा ही। पहले आप अंदर आ जाइये।'' उस औरत ने कहा। उसका नाम रत्ना था।

राजा अंदर गये और एक पुरानी कुर्सी में बैठ गये। बगल में ही चटाई पर सो रहे अपने पति परमेश को जगाते हुए रत्ना ने कहा, ''सुनो, कोई परदेशी आये हुए हैं। बहुत भूखे हैं। बैंगन की तरकारी बनाना और ज्वार की चार-पाँच रोटियाँ भी गरम करना।''

- किशोर राठी -
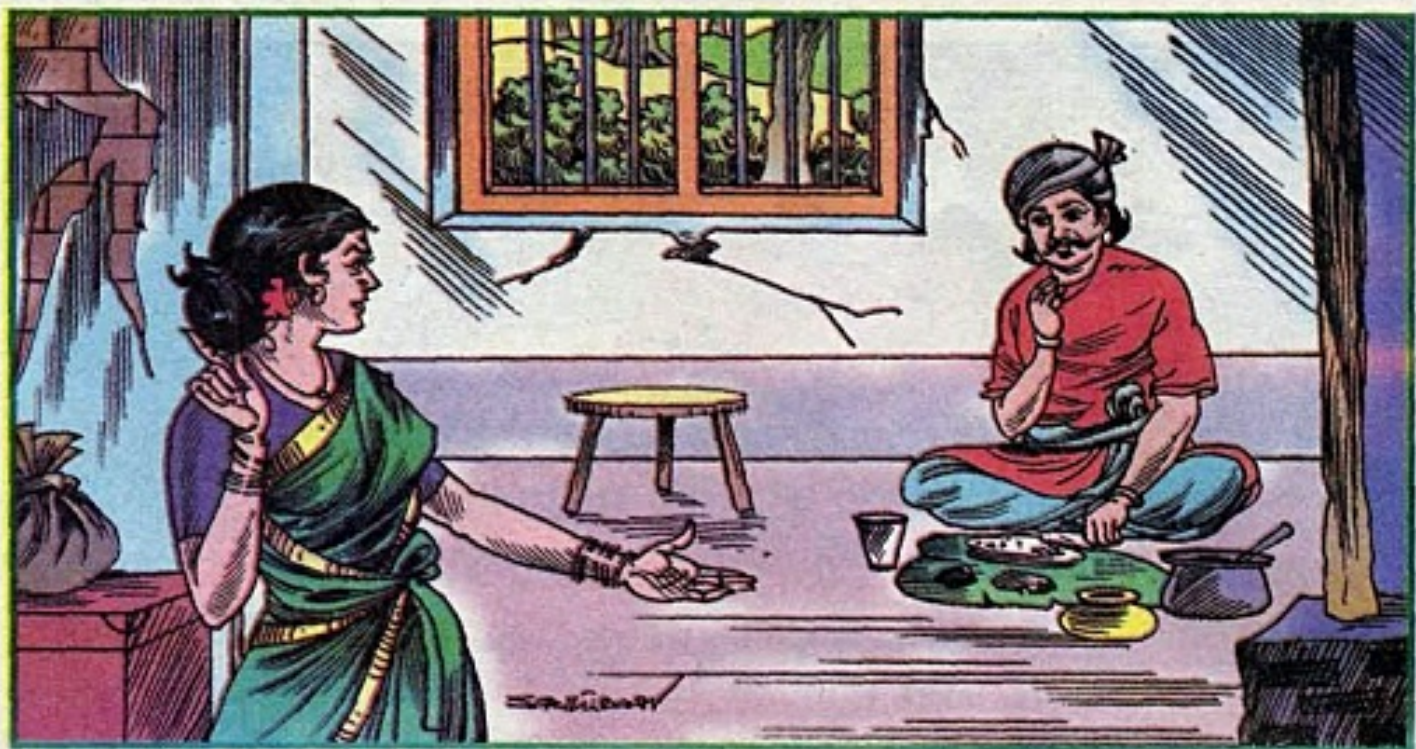
परमेश ने बैठे-बैठे ही राजा की ओर एक बार ग़ौर से देखा और फिर पिछवाडे में जाकर चार बैंगन तोड़ रसोई में लग गया।

''हमारे राजा की कृपा से मेरे पति ही रसोई का काम संभालते हैं,'' कहती हुई रत्ना हँस पड़ी। राजा की समझ में नहीं आया कि उसके पति की रसोई के काम से राजा की कृपा का क्या संबंध है।

थोड़ी ही देर में बैंगन और रोटियाँ बन गयीं। रत्ना ने राजा से कहा, ''चलिये खाने। हमारे राजा की कृपा से मेहमान को हाथ-पैर धोने के लिए पानी भी देने की हालत में नहीं हैं।'' कहती हुई वह हँस पड़ी।

फिर बैंगन की तरकारी व रोटियाँ परोसते हुए रत्ना ने कहा, ''हमारे राजा की कृपा से आपको यह भोज दे पा रही हूँ।''

राजा ने भरपेट खाया और हाथ धोकर लौटने के बाद पूछा, ''आप हर बार अपने राजा की याद करती हैं। यह आपकी राजभक्ति का जीता-जागता सबूत है।''

राजा की बातों पर वह ठठाकर हँस पड़ी। तब राजा चकित रह गये और पूछा, ''क्या आप राजा को नहीं चाहते? उनके प्रति श्रद्धा व भक्ति की भावना नहीं है?'' उनके स्वर में थोड़ा-सा क्रोध भी था।

रत्ना ने कहा, ''मेरी बातें ध्यान से सुनियेगा। लगता है कि हमारे राजा यह नहीं जानते कि उनके राज्य में लाखों की तादाद में सामान्य नागरिक हैं। उन्हें कवि व कलाकारों के अलावा कोई नहीं दीखते। मेरे पति शिक्षित हैं। पर क्या फ़ायदा ? राज्य में योग्य लोगों के लिए नौकरियाँ नहीं हैं। दहेज में मेरे माँ-बाप ने छोटी रक़म दी थी। उसी को ब्याज में देकर घर चला रही हूँ। मेरे पति ही रसोई का काम

संभालते हैं, क्योंकि उन्हें डर है कि मैं कहीं फालतू खर्च न कर बैठूँ। वे नौकरी नहीं करते, यह राजा की कृपा है।''

राजा सोच में पड़ गये। इतने में रत्ना ने फिर से कहना शुरू कर दिया, ''नगर के बग़ल की नदी का पानी समुद्र में जा मिलता है। इससे जनता को कोई फ़ायदा नहीं होता। हमारे राजा यह सोचते ही नहीं हैं कि कैसे इस पानी का उपयोग किया जाए और जनता की आवश्यकताओं की पूर्ति की जाए। उनकी कृपा से अतिथियों को हाथ-पैर धोने के लिए पानी देने की हालत में भी हम नहीं हैं। इसी कारण आपको सीधे रसोई घर में ले गयी।''

राजा ध्यानपूर्वक उसकी बातें सुन रहे थे। रत्ना ने बोलना जैसे ही बंद किया, उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा, ''ठीक है, राजा की कोई और कृपा हो तो उसे भी बताना।''

रत्ना मन ही मन सोचने लगी कि इस परदेशी को राजा के बारे में जानने की इतनी उत्सुकता क्यों है। पर वह फिर कहने लगी, ''लोगों की कम से कम ज़रूरतें हैं, रोटी, कपड़ा और मकान। हमारे राजा इस संबंध में सोचते ही नहीं। बेचारे को संगीत और नृत्य में ही रुचि है। उन्हीं में वे हमेशा डूबे रहते हैं। यह सब सोचने के लिए उन्हें फ़ुरसत ही कहाँ हैं। दूर से आये परदेशियों को ज्वार की रोटी खिलानी पड़ती है। मैं लाचार हूँ, माफ़ कीजिए।''

अब राजा कमलाकर को ज्ञात हो गया कि उससे कितनी बड़ी भूल हो गयी। उन्होंने अपनी असलियत प्रकट करते हुए कहा, ''तुम्हारे पति की रसोई अद्‌भुत है। उसका स्वाद निराला है। राजप्रासाद रसोइयों को भी रसोई बनाना सिखाने की योग्यता रखते हैं। अब रही आपकी बात। रानी की मुख्य सखी के स्थान पर रहकर इसी प्रकार आप उन्हें सुझाव देते रहिये और बिना किसी झिझक के ऐसे ही बोलते रहिये। आगे से अपने को सुधारूँगा और यथासाध्य अपनी जनता की भलाई करता रहूँगा। देरी किस बात की? कल ही राजप्रासाद पहुँच जाइये।''

दूसरे दिन पति के साथ राजा के अंतःपुर में जाती हुई रत्ना अपने आप कहने लगी, ''सब राजा की कृपा है।''

देव के सवाल

प्रशांतवर बड़ा ही सुंदर गाँव है। उसके चारों ओर पहाड़ हैं और गाँव के बाहर कलकल करती हुई नदी प्रवाहित होती रहती है। उसी के किनारे एक कुटीर में मौन योगी नामक एक वेदांती रहते हैं। परंतु महीने में एक ही बार पूर्ण चंद्रमा के दिन भक्तों को दर्शन देते हैं। एक घंटे तक भक्तों से पूछे जानेवाले प्रश्नों के वे उत्तर देते हैं, उनके संदेहों की निवृत्ति करते हैं और बाकी दिन ध्यान-मग्न रहते हैं।

पूर्णिमा के एक दिन भक्तों ने उनके दर्शन किये, उनके प्रवचन सुने और उनकी अनुमति लेकर वहाँ से चले गये। देव नामक एक व्यक्ति मात्र सिर झुकाकर उस योगी के सामने बैठा रहा। उसकी उम्र पचास से ज़्यादा ही होगी। ''पुत्र, क्या कुछ पूछना चाहते हो?'' योगी ने पूछा।

एक पल के लिए वह सकपकाता रहा और फिर बोला, ''स्वामी, इधर कुछ दिनों से इस विश्व को लेकर, सृष्टिकर्ता कहलाये जानेवाले भगवान को लेकर मुझमें तरह-तरह के प्रश्न उत्पन्न हो रहे हैं। उनके समाधान जानने के लिए मैं आपके पास आया हूँ।''

''अवश्य पूछो, वत्स,'' योगी ने कहा।

''स्वामी, सबका यही कहना और मानना है कि जीवों की सृष्टि उस भगवान ने ही की। परंतु, उत्तम सृष्टि कहलाये जानेवाले मानव में इतने भेद क्यों हैं? मनुष्य, मनुष्य के बीच में शत्रुता है, प्रतिकार है, द्वेष है, युद्ध होते रहते हैं, हत्याएँ होती हैं, एक-दूसरे को धोखा देते हैं। ये सबके सब आख़िर हैं क्या? ऐसा क्यों होता है? मनुष्यों के सृष्टिकर्ता वे भगवान यह सब देखकर भी चुप क्यों रहते हैं, स्वरचित इस सृष्टि की दुस्थिति को

- सुचित्रा -

वे क्यों नहीं सुधारते? ये प्रश्न मुझे अशांत करते रहते हैं,'' देव ने गंभीर स्वर में पूछा।

योगी ने मुस्कुराते हुए कहा, ''तुम्हारी कितनी संतान है?''

''चार, स्वामी। दो बेटे और दो बेटियाँ।''

''सबकी परवरिश तुमने प्रेमपूर्वक ही की?''

''हाँ स्वामी, बड़ी ही अच्छी तरह से उनकी परवरिश की,'' देव ने कहा।

''अच्छा किया। अब वे सबके सब कैसे हैं? वे कहाँ-कहाँ हैं?'' योगी ने पूछा।

''क्या और कैसे कहूँ स्वामी? हमने और मेरे माता-पिता ने बड़े ही प्रेम के साथ, बड़े ही लाड़-प्यार के साथ बड़े लड़के को पाला-पोसा। इस कारण वह शिक्षित नहीं हो पाया। बुरी लतों का वह शिकार हुआ। सोलह साल की उम्र में ही वह लुटेरों के गिरोह में शामिल हो गया। एक साहूकार की हत्या करके कहीं भाग गया।'' देव ने दीन स्वर में कहा।

''दूसरा बेटा?'' योगी ने पूछा।

''स्वामी, वह शिक्षित है। शहर में नौकरी करता है और पहले हर महीने थोड़ी-सी रक़म मुझे भेजा करता था। हमारी जानकारी के बिना ही किसी धनी की बेटी से शादी कर ली। तब से उसमें कायापलट हो गयी है। साल में एक ही बार हमें देखने आता है,'' देव ने कहा।

''ठीक है, अपनी बेटियों के बारे में भी तो कहो,'' योगी ने पूछा।

''हमने बड़ी बेटी को पढ़ाने की खूब कोशिश की। पर पढ़ाई के प्रति उसमें अभिरुचि नहीं थी। सत्रह साल की उम्र में वह बहुत बीमार पड़ गयी। हमने उसे बचाने की भरसक कोशिश की, पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। वह मर गयी,'' देव ने दर्द-भरे स्वर में कहा।

योगी थोड़ी देर तक मौन रह गये और फिर

पूछा, ''अपनी दूसरी बेटी का क्या हुआ?''

योगी के इस सवाल पर खुश होते हुए देव ने कहा, ''स्वामी, उसी की वजह से मैं और मेरी पत्नी अब थोड़ा-बहुत सुखी हैं। मेरी छोटी बेटी बहुत अच्छा गाती है। अड़ोस-पड़ोस के बच्चों को संगीत सिखाती है और मेरी तथा मेरी पत्नी की देखभाल करती है।''

योगी ने भी उसके इस उत्तर पर खुश होकर सिर हिलाते हुए कहा, ''देखा, तुमने चार को जन्म दिया। सबकी परवरिश प्यार से की और एक समान ही बड़ा किया। फिर भी वे चारों चार प्रकार के हो गये। इसमें तुम्हारी जितनी जिम्मेदारी है उतनी ही जिम्मेदारी करोड़ों मानवों की सृष्टि के सृष्टिकर्ता की भी है।''

योगी के उत्तर से देव संतृप्त नहीं हुआ। योगी यह ताड़ गये और कहा, ''तुमने पहले जो संदेह प्रकट किये, उनका उत्तर विस्तारपूर्वक दूँगा। सुनो, जीवन में जिन कष्ट-सुखों से हम गुज़रते हैं, जय-पराजय जो होते हैं, उनके अनेक कारण होते हैं। मनुष्य जब समझता है कि उसकी विजय का पूरा श्रेय उसी को है, तब जब उसकी हार होती है, तब भी इसका जिम्मेदार वही होता है न? यह समझना ग़लत है कि भगवान मनुष्यों के बीच के भेद को, प्रतिकार, द्वेष को देखते हुए चुप रह जाते हैं। वे मनुष्यों के किये गये कर्मों के योग्य फल अच्छाई बुराई के रूप में हमें प्रदान करते हैं। कुछ कर्मों के फल तत्काल प्राप्त होते हैं। कुछ और कर्मों के फल भोगने के लिए बहुत समय लग सकता है। भगवान की शक्ति को गहराई से समझना चाहिए, न कि त्रुटि मानकर उनपर आरोप लगाना चाहिए।''

इस उत्तर ने शायद देव को तृप्त किया होगा। उसने श्रद्धापूर्वक योगी के पैरों को प्रणाम किया। योगी ने उसे आशीर्वाद दिया और ध्यान मंदिर की ओर चले गये।

परोपकार

अरुणपुर में वीरमल्लु नामक एक चोर था। वह घरों में सेंध लगाकर तथा रास्ते में चलनेवाले मुसाफ़िरों को लूटकर अपना पेट पालता था। उसने अपनी ज़िंदगी में कोई पुण्य कार्य नहीं किया था।

एक दिन रात्रि के समय जब वह एक घर में सेंध लगा रहा था, उसे लगा कि घर के भीतर लोग जाग रहे हैं। दो व्यक्ति बातचीत कर रहे थे। वीरमल्लु ने उनकी बातें सुनीं। एक युवक अपनी माँ से कह रहा था, ''माँ, मुझे कल सबेरे पड़ोसी गाँव में जाना है। इसलिए मुझे अपने हिस्से के भात और मिट्टी के हिस्से के भात की दो पोटलियाँ बनाकर दे देना।''

माँ ने कहा, ''अच्छी बात है, बेटा!'' इसके बाद माँ-बेटे दोनों सो गये।

यह वार्तालाप सुनने के बाद वीरमल्लु अपने सेंध लगानेवाले काम को भी भूल गया। उसे युवक की बातें ज़रा भी समझ में न आयीं। उसका अर्थ समझने की इच्छा चोर के मन में जाग उठी। इसलिए वह सबेरा होने तक वहीं पर खड़ा रहा।

तड़के माँ-बेटे नींद से जाग पड़े। बेटा अपनी यात्रा की तैयारी कर रहा था, माँ ने दो पोटलियाँ उसके हाथ में रख दीं।

माँ के हाथ से दो पोटलियाँ लेकर वह युवक घर से चल पड़ा। उसके थोड़ी देर बाद चोर वीरमल्लु भी निकल पड़ा। चलते-चलते दुपहर हो गयी। युवक एक पेड़ की छाया में खाने बैठा। वीरमल्लु भी उसी पेड़ की छाया में जा बैठा।

युवक ने वीरमल्लु को देखा। उसने दोनों पोटलियाँ खोल दीं। एक अपने सामने रखी और दूसरी वीरमल्लु के आगे।

युवक का यह व्यवहार देख वीरमल्लु

अचरज में आ गया। वह उस युवक को बिलकुल नहीं जानता था, फिर भी उसने बिना पूछे उसके सामने खाना रख दिया। वीरमल्ल ने अपनी जिंदगी में किसी का कोई उपकार नहीं किया था, इसलिए युवक का यह काम उसे विचित्र लगा।

वीरमल्ल ने युवक से पूछा, "भाई साहब, मेरी एक शंका है। उसे तुम दूर करोगे तो मैं तुम्हारा दिया यह खाना खा लूँगा।"

"पूछो!" युवक ने जवाब दिया।

"मेरा पेशा तो चोरी करने का है। कल रात को जब मैं तुम्हारे घर सेंध लगाने आया था, मैंने तुम्हारी वे बातें सुनीं जो तुम अपनी माँ से कह रहे थे। उनका अर्थ जानने के लिए ही मैं तुम्हारे पीछे-पीछे यहाँ तक चला आया हूँ।" चोर ने कहा।

इस पर युवक ने हँसकर कहा, "देखो, मैं जो खाना खानेवाला हूँ, यह मिट्टी के हिस्से का भात है। तुम्हें जो दे रहा हूँ, वह मेरे हिस्से का भात है।"

"तुम्हारी बातें मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रही हैं। तुम जो खाना खाते हो, वह तुम्हारे हिस्से का खाना होता है, मगर मैं जो खाता हूँ, वह तुम्हारे हिस्से का खाना कैसे होगा?" वीरमल्ल ने पूछा।

"मैं जो खाना खाता हूँ, वह एक जून भी बचा नहीं रहता। वह हज़म होकर मिट्टी में मिल जाता है। मगर मैं तुम्हें जो खाना देता हूँ, वह पुण्य कार्य के रूप में हमेशा के लिए मुझे प्राप्त होता है। तुम चोरियाँ करके कमाकर खाते हो, वह खर्च हो जाता है, लेकिन तुमने दूसरों का क्या उपकार किया? तुमने अपने लिए क्या बचा रखा? अब भी सही, परोपकार करते हुए अपने दिन बिताओ।" युवक ने समझाया।

ये बातें सुनकर चोर की आँखें खुल गयीं। उसने चोरी करना छोड़ दिया। उस दिन से मेहनत के साथ वह काम करता, जो कुछ कमाता, उसमें से दूसरों की सहायता भी करता। इस तरह परोपकार करते हुए वह अपने दिन बिताने लगा।

चन्दामामा प्रस्तुति
अपराजेय गरुड़
26
चित्र : महेश
जब आदित्य को बंदी बनाने के लिए चन्द्रपुरी जाते समय कमाण्डर नरेन्द्रदेव की नाव डूब जाती है तब मगरमच्छ उस पर आक्रमण कर देते हैं। वह अपने दोनों पैर और एक हाथ खो बैठता है। पहले से ही सर्पद्वीप में मौजूद आदित्य मंदिर की गुफा में प्रवेश करता है जहाँ उसके अंगरक्षक रवीन्द्रदेव तथा आत्मपुरुष को बंदी बना लेते हैं। तांत्रिक और आदित्य का आमना-सामना होता है। दोनों में युद्ध होता है। नागबंधु अपने रूप को एक भयंकर सर्प में बदल लेता है। आदित्य की पगड़ी में रखा पंख भयानक पक्षी-गरुड़ के डैनों में बदल जाता है। कौन जीतेगा? कहानी उत्तेजक उपसंहार की ओर आगे बढ़ती है।

जैसे ही तीन सिर वाला सर्प अग्निकुण्ड में गिरता है, तांत्रिक बहुत ज़ोर से चीखता है।
यह कैसा बेतुका अंत है?
गरुड़ ! मेरा जानी दुश्मन ! एक दिन आयेगा... ई... इ...!
बड़े ज़ोर की गड़गड़ाहट की आवाज के साथ गुफा का मंदिर धराशायी हो जाता है।
चलो, यहाँ से चल चलो !
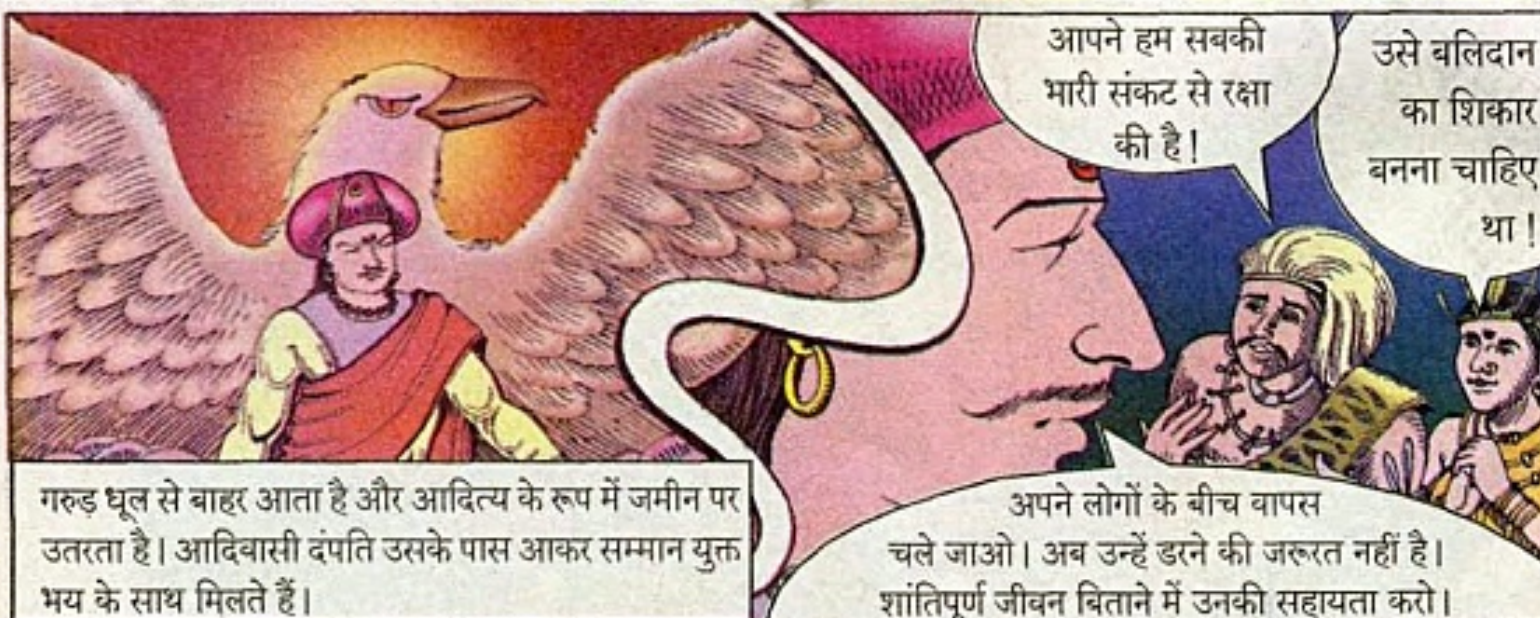
आपने हम सबकी भारी संकट से रक्षा की है !
उसे बलिदान का शिकार बनना चाहिए था !
गरुड़ धूल से बाहर आता है और आदित्य के रूप में जमीन पर उतरता है। आदिवासी दंपति उसके पास आकर सम्मान युक्त भय के साथ मिलते हैं।
अपने लोगों के बीच वापस चले जाओ। अब उन्हें डरने की जरूरत नहीं है। शांतिपूर्ण जीवन बिताने में उनकी सहायता करो।

आदित्य आदिवासी दम्पति को उन्हें पहाड़ी के नीचे ले जाने के लिए कहता है। अंगरक्षक अपने दो बंदियों के साथ उसका अनुगमन करते हैं।
हमें एक ऐसे स्थान पर ले चलो जहाँ से हम नदी को पार कर सकते हैं।
जी हुजूर!
वे नरेन्द्रदेव के पास आते हैं जो एक पेड़ का सहारा लिये हुए है।
पिता ! आइये, हम लोग चन्द्रपुरी वापस चलें !
नहीं रवीन्द्र ! मृत्युपर्यन्त मुझे यहीं रहने दो। राजा से मुझे क्षमा करने का अनुरोध करो।
आप्त पुरुष आदित्य के निकट आने का प्रयास करता है। अंग रक्षक उसे रोक देते हैं।
महानुभाव ! कृपया मुझे यहीं रहने दें। मैं चन्द्रपुरी में कभी कदम नहीं रखूँगा।
रक्षक ! उसे छोड़ दो। रवीन्द्रदेव को साथ ले आओ।
अंगरक्षक, रवीन्द्रदेव और आदित्य सावधानी से नदी पार करते हैं।
रक्षक ! जब हम सब किनारे पर पहुँच जायें तब महल में संदेश भेज दो।

चन्द्रगिरि की प्रजा प्रधानमंत्री आदित्य की वापसी से उत्तेजित है।
आदित्य लगभग मुख्यद्वार तक आ चुका है। मैं उसका स्वागत करने जाता हूँ, अरुणा !
हाँ महाराज, मैं आप दोनों की प्रतीक्षा करूँगी।
राजा और आदित्य एक दूसरे के गले मिलते हैं।
महाराज ! मैं सुरक्षित वापस आ गया हूँ।
आदित्य, तुम विजेता बनकर वापस आये हो ! बधाई ! प्रजा तुम्हें देखने के लिए बेचैन हो रही है।
अरुणा द्वारमण्डप में उनमें शामिल हो जाती है।
आदित्य ! तुम्हें मालूम है, मेरी कोई सन्तान नहीं है। मैं गोद लेकर अरुणा को अपनी बेटी बनाता हूँ। क्या उससे विवाह करोगे?
महाराज ! मैं आपके आदेश की अवज्ञा कैसे कर सकता हूँ?
महल का प्रांगण लोगों से ठसाठस भरा है। वे उसकी जयजयकार कर रहे हैं।
मातृभूमि का रक्षक !
हमारे प्रधानमंत्री का स्वागत है।
वीर आदित्य की जय हो।
मेरे प्यारे दोस्तो ! मैं एक दीर्घ काल तक आप सबकी सेवा करने आया हूँ।
राजा को सुनना चाहते हैं।

भीड़ में शान्ति छा जाती है।

मेरे बच्चो! मैं आदित्य को युवराज नियुक्त कर रहा हूँ। वह अरुणा से विवाह करेगा जिसे मैंने बेटी अंगीकार किया है।

रवीन्द्रदेव को रक्षक पकड़कर ले जा रहे हैं।

ओह! प्रभु!

अरुणा और महेन्द्रवर्मा के शाही कक्ष में जाने के बाद आदित्य अपने निवास में जाता है, जहाँ वह अपने पिता के चित्र के सामने खड़ा होता है।

पिता, मैं आपका आशीर्वाद चाहता हूँ।

जयजयकार की ध्वनि से आकाश गूंजता है। शांति के बाद राजा पुनः रवीन्द्रदेव की ओर संकेत करता है।

कमाण्डर को मगरमच्छों ने विकलांग कर दिया है। वह वापस नहीं आना चाहता।

कमाण्डर नरेन्द्रदेव का बेटा राजद्रोही है।

मैं उसे चन्द्रपुरी से देशनिकाला कर रहा हूँ।

महाराज, मुझ पर दया करें।

आदित्य अपनी पगड़ी से पंख निकाल लेता है और गरुड़ की प्रतिमा के सामने रख देता है और ध्यानमग्न हो आँखें बंद कर लेता है। उसे एक आवाज सुनाई पड़ती है।

आदित्य, एक ऐसा समय आ सकता है जब तुम्हें पुनः अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए आह्वान किया जायेगा। गरुड़ आशीर्वाद दें।

समाप्त
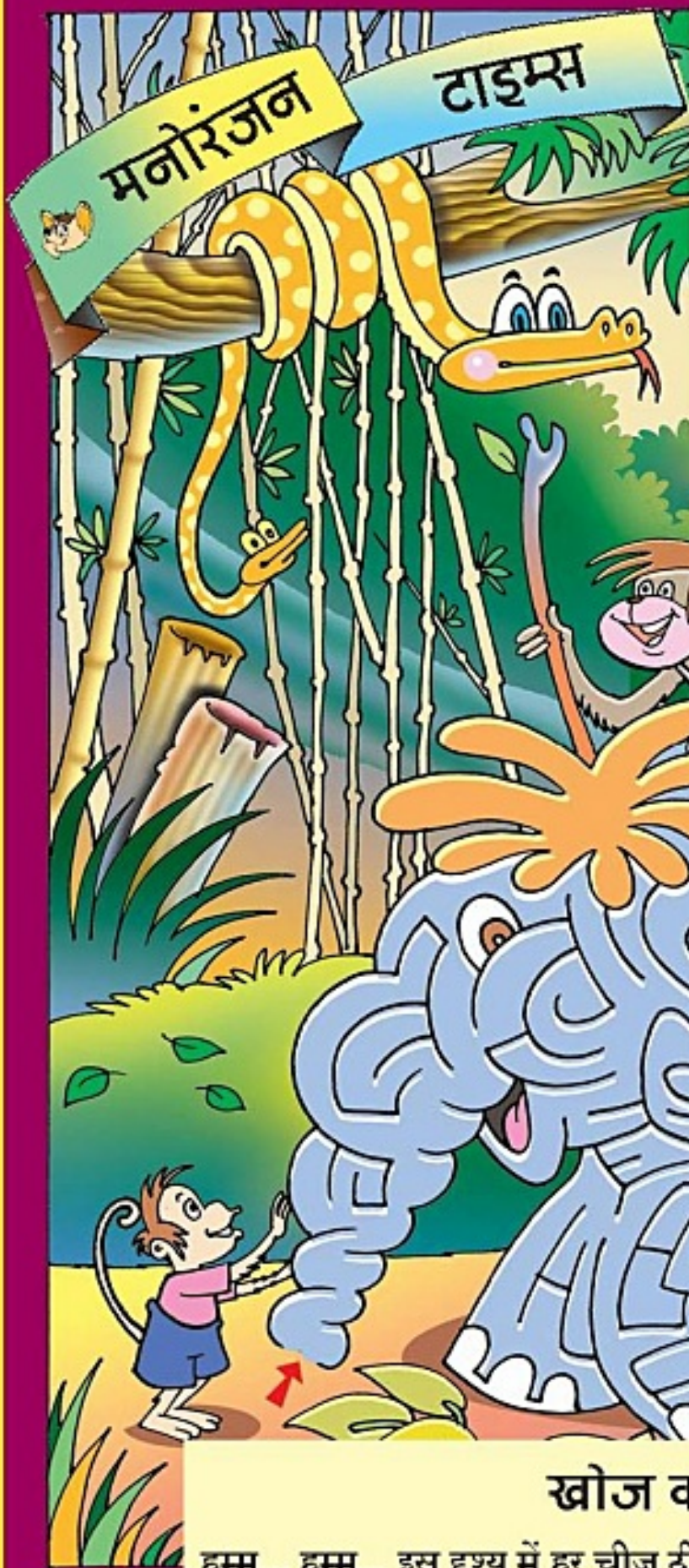
मनोरंजन टाइम्स
भुलभुलैया का चक्कर
मोनिश कपीश हाथी की सवारी का मज़ा ले रहा है। मित्रा मंकी भी शामिल होना चाहता है। क्या मित्रा को भुलभुलैया से होकर हाथी की पीठ पर चढ़ने में मदद करोगे?
खोज करो
हम्म्... हम्म्... इस दृश्य में हर चीज़ ठीक-ठाक नहीं है। क्या खोज कर सकते हो कि इसमें अनूठा क्या दिखाई पड़ता है?

उन्हें खोजो

इस वृक्ष में कुछ विचित्र बात है। बाबा रे बाबा ! जंगल के सभी जानवर इसके अन्दर छिपे हुए मालूम पड़ते हैं। जाँच-पड़ताल करके देखो कि क्या तुम उन्हें खोज सकते हो।

बेमेल महाशय !

चिंचियाती गिलहरी और उसके भाई बंधु एक दूसरे की नकल करने में माहिर हैं, लेकिन हमेशा नहीं। जरा गौर से देखो और पता लगाओ कि कौन महाशय दूसरों से अलग-थलग है?

पार्टी टाइम

आह ! रवि रूस्टर गिटार बजा रहा है। उफ ! कलाकार उसमें रंग भरना भूल गया। क्यों नहीं तुम रवि को कुछ चमकीले रंग दे दो?

(उत्तर - पृष्ठ ६६ पर)
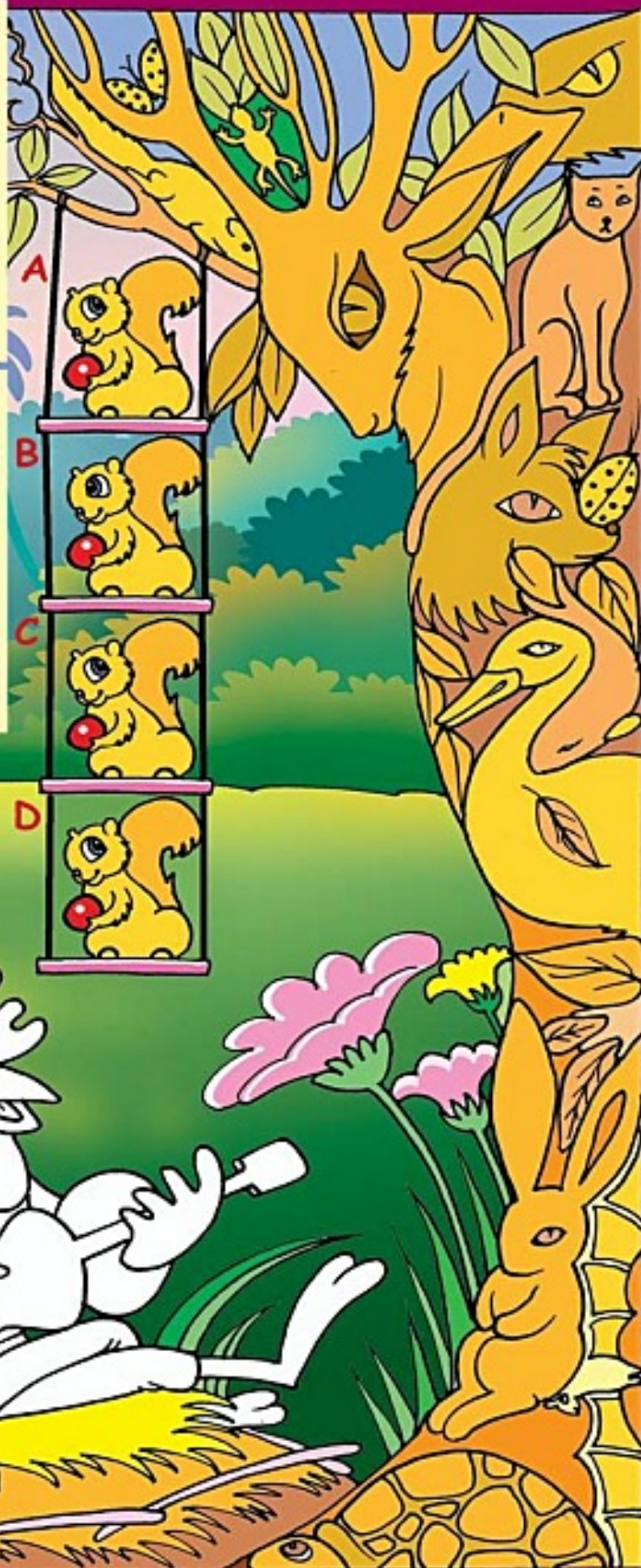
चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

**क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो,
जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?**

चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा,
प्लाट नं. ८२ (पु.न. ९२), डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई -६०० ०९७.

जो हमारे पास इस माह की २० तारीख तक पहुँच जाए । सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/-रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा ।

बधाइयाँ

मार्च अंक के पुरस्कार विजेता हैं :
अनुराग यादव
१८२, फेथफुल गंज, कैंट,
कानपुर - २०८ ००४.

विजयी प्रविष्टि

मोटर बाइक हुई बीमार ।
नंदी पर हो जाओ सवार ।।

मनोरंजन टाइम्स के उत्तर (पृष्ठ-६४-६५)

उन्हें खोजो : पेड़ में १४ जानवर छिपे हैं। चूहा, तितली, छिपकली, गिलहरी, हिरण, बाज, बिल्ली, लोमड़ी, सोनपंखी, मछली, बतख, खरगोश, चमगादड़ और कछुआ।

बेमेल महाशय : B

खोज करो : साँप की पूँछ के स्थान पर दूसरा सिर है।

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K. Press Pvt. Ltd., Chennai - 600 026 on behalf of Chandamama India Limited, No. 82, Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097. Editor : Viswam

Hiya! What has hit the animal world?

Listen hard and look keenly.

D'you hear the jingle of the jungle?
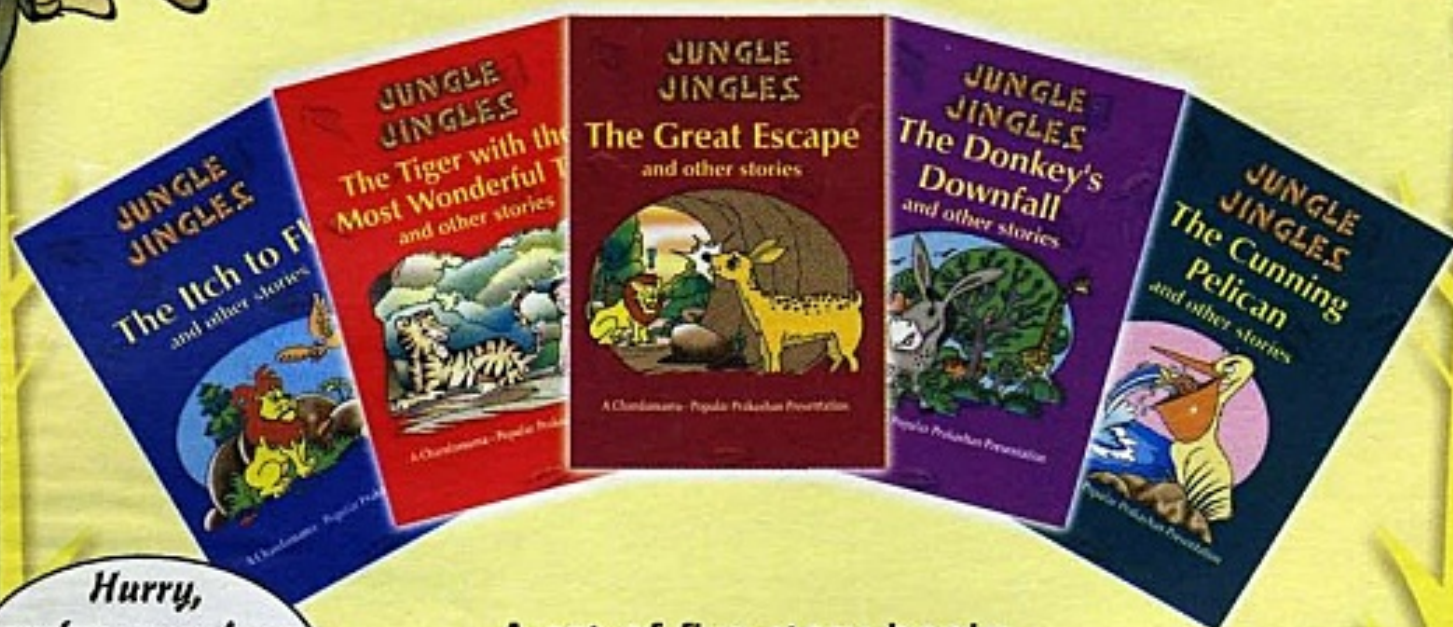
Hurry, grab a copy from your nearest bookstore, now!

A set of five story books
with the whackiest and most
interesting collection of animal stories
ever written.

From

CHANDAMAMA and Popular prakashan

NOW AVAILABLE

CHANDAMAMA (Hindi) MAY 2003
Regd. with Registrar of Newspaper for India No. 1087/57
Registered No. TN/PMG(CCR)-594/03-05
Licensed to post without prepayment No. 381/03-05
Foreign - WPP No. 382/03-05